ओ३म्

परिवार और समाज के नवनिर्माण का मासिक

शांतिधर्मी

सितम्बर, 2014

प्रकृति का नवोन्मेष है।
जागरण निर्विशेष है।।

₹10

पूर्णांक
188

अर्बन एस्टेट जीन्द, महर्षि दयानन्द योग चिकित्सा आश्रम के तत्त्वावधान में इण्डस स्कूल के प्रांगण में आयोजित मासिक सत्संग एवं स्वामी आर्यवेश प्रधान सा०आ०प्र०सभा का अभिनन्दन। स्वामी रामवेश जी, मुख्य अतिथि श्री सुभाष श्योराण व विशिष्ट अतिथि श्री वेदप्रकाश बेनीवाल।

जेसीआई जीन्द द्वारा स्वतंत्रता दिवस की पूर्व संध्या पर आयोजित कवि सम्मेलन में मंचस्थ कवि सर्वश्री ओम प्रकाश चौहान, रामफल खटकड़, राजेन्द्र मानव, सहदेव समर्पित, देवदत्त देव, नरेन्द्र अत्री। दूसरे चित्र में आर्य समाज रामनगर जीन्द के त्रिदिवसीय कार्यक्रम में यज्ञ करवाते हुए सहदेव शास्त्री।

हिण्डौन में कल्पना चावला पुरस्कार ग्रहण करती कु० स्मृति गोयल व जींद में शांतिधर्मी परिसर में पूर्णिमा यज्ञ

ओ३म्

शं नो मित्रः शं वरुणः शं नो भवत्वर्यमा।

परिवार और समाज के नवनिर्माण का मासिक

शान्तिधर्मी

सितम्बर, २०१४

वर्ष-१६ अंक-८ भाद्रपद-आश्विन २०७१ विक्रमी
सृष्टि संवत्-१६६०८५३११५, दयानन्दाब्द : १६२

सम्पादक : चन्द्रभानु आर्य
(चलभाष ०८०५६६-६४३४०)
संयुक्त सम्पादक : सहदेव समर्पित
(चलभाष ०६४१६२-५३८२६)
उपसम्पादक : सत्यसुधा शास्त्री
प्रबंध संपादक : सुभाष श्योराण
आदरी सम्पादक : यज्ञदत्त आर्य
सह-सम्पादक : राजेशार्य आट्टा
डॉ० विवेक आर्य
नरेश सिहाग बोहल
सहयोग : आचार्य आनन्द पुरुषार्थी
श्रीपाल आर्य, बागपत
महेश सोनी, बीकानेर
भलेराम आर्य, सांघी
कर्मवीर आर्य, रेवाड़ी
विधि परामर्शक : जगरूपसिंह तंवर
कार्यालय व्यवस्थापक : रविन्द्रकुमार आर्य
कम्प्यूटर सज्जा : बिशम्बर तिवारी

मूल्य
एक प्रति : १०.०० रु.
वार्षिक : १००.०० रु.
आजीवन : १०००.०० रु.

कार्यालय :
७५६/३, आदर्श नगर, सुभाष चौक,
जीन्द–१२६१०२ (हरियाणा)
दूरभाष : ६४१६२–५३८२६
ई-मेल-shantidharmijind@gmail.com

प्रेरणा स्तम्भ

इच्छाओं पर विजय पाने वाले और कर्त्तव्य से विचलित नहीं होने वाले व्यक्ति का कद पहाड़ से भी ऊँचा हो जाता है।

–संत तिरुवल्लुवर

क्या? कहाँ?....

आलेख
ब्रह्मविद्या कौन प्राप्त कर सकता है! ८
हिन्दी के प्रचार प्रसार में महर्षि का योगदान ९
मुंशी प्रेमचन्द के उद्‌गार १०
शिक्षा में सुधार की आवश्यकता १२
देश की रक्षा कौन करेगा १३
श्रीराम का जीवन : कुछ प्रश्न और समाधान १८
वेदों के बारे में दर्शनशास्त्र और गीता २०
मैं कैसा मरण चाहता हूँ २२
घर पर बनाएँ और खाएँ सौंठ पाक/खुजली से राहत २४
कहानी/प्रसंग : वीरवर गोकुला (इतिहास कथा) : १५,
रूप बड़ा या गुण? २७, अति छोड़ो-२७, स्वर्ग नरक-२७
मन की गन्दगी/ मूर्ति पूजा की निस्सारता-२८
कविताएँ- १७, २५, २८
स्तम्भ-आपकी सम्मतियाँ ५, अनुशीलन, सोम सरोवर ६
चाणक्य नीति, अमृतवचनावली ७,
बाल वाटिका २६, भजनावली २९,
साथ में : समाचार सूचनाएँ, संस्कृति दर्शन

वेद-विचार सामवेद आग्नेय पर्व

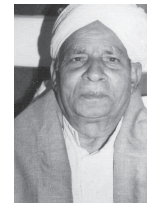

पद्यानुवाद : स्व० आचार्य विद्यानिधि शास्त्री

ईडिष्वा हि प्रतिव्यां३यजस्व जातवेदसम्।
चरिष्णुधूममगृभीतशोचिषम्।।१०३।।

हर अवयव में जो व्यापक है उसका तू प्रिय पूजन कर।
वैदिक विद्या का जो निधि है उसका यजन भजन तू कर।।
चरणशील[१] जिसके धूंए की सब भुवनों में घूम मची।
अमितदीप्ति[२] अज्ञेयशक्ति[३] उस अग्निदेव ने सृष्टि रची।।

शब्दार्थ : १=घूमने वाले, २=अपरिमित चमक वाले, ३= जिसकी शक्ति जानी नहीं जा सकती।

पूर्ण सम्पादक मण्डल अवैतनिक है। पत्रिका में व्यक्त लेखकों के विचारों से सम्पादक मण्डल का सहमत होना अनिवार्य नहीं है। किसी भी प्रकार के विवाद का न्याय क्षेत्र जीन्द होगा।

मनुष्य बनाने की शिक्षा

❑चन्द्रभानु आर्य

मनुष्य जीवन की सफलता के लिए शिक्षा का स्थान सर्वोपरि है। अशिक्षित व्यक्ति का जीवन पशु के समान होता है। हमारी संस्कृति मनुष्य जीवन की सार्थकता पर केन्द्रित है। इसलिए इस देश में सदा से शिक्षा को सबसे ऊँचा स्थान दिया गया है और शिक्षा प्रदान करने वाले ब्राह्मणों को सर्वोच्च सम्मान दिया गया है। शिक्षा और शिक्षक ही हमारे देश की शक्ति का आधार भी रहे हैं। अंग्रेज ने इस बात का अध्ययन किया और शक्ति के इस मूल पर कुठाराघात करने के लिए दीर्घकालिक योजना बनाई। वह योजना समय के साथ फलीभूत हुई। आज वह व्यक्ति जिसने केवल मैकाले की पद्धति से शिक्षा ग्रहण की है वह अपनी जड़ों से पूरी तरह कट चुका है। यह देश की शक्ति का सबसे बड़ा क्षरण है। आज इस पर चर्चा हो रही है और शिक्षा पद्धति में सुधार करने की बात हो रही है, यह हर्ष का विषय है।

मैकाले और उसके साथियों की योजना के अनुसार अंग्रेज ने इस देश को स्थायी रूप से गुलाम बनाने के लिए और अपने सेवक उत्पन्न करने के लिए इस पद्धति को लागू किया था। अंग्रेज के आने से पहले मुस्लिम शासकों ने इस देश का चाहे कितना ही भौतिक नुकसान किया हो, वे यहाँ की शिक्षा को लाख प्रयत्न करके भी मिटा नहीं सके थे। थामस मुनरो नाम का व्यक्ति १८१३ ई० के आसपास मद्रास प्रांत का गवर्नर था। वह लिखता है कि उस समय मद्रास प्रांत में ४०० लोगों पर कम से कम एक गुरुकुल था। उस समय मद्रास प्रांत में आज के आंध्रप्रदेश, तमिलनाडु, केरल और कर्नाटक के कुछ भाग आते थे। उत्तर भारत के संबंध में एक अन्य व्यक्ति जी० डब्ल्यू लिटनेर ने १८२२ में लिखा है कि उत्तर भारत में २०० लोगों पर कम से कम एक गुरुकुल है। अधिक ज्ञात विद्वान मैक्समूलर के अनुसार बंगाल प्रांत में ८० हजार से अधिक गुरुकुल थे, जो सहस्रों वर्षों से चल रहे थे। समस्त भारत का औसत निकालने पर गुरुकुलों की कुल संख्या ७ लाख ३२ हजार बनती है। उस समय भारत में गाँवों की संख्या भी इतनी ही थी। तात्पर्य यह हुआ कि प्रत्येक गाँव में गुरुकुल था और उसमें प्रत्येक बच्चे का जाना अनिवार्य था। उस समय भारत के ९७ प्रतिशत लोग साक्षर थे। विदेशी अध्येताओं के आंकड़े यह स्पष्ट करते हैं कि भारत में शिक्षा के महत्त्व को सदा से समझा गया और इसे सर्वोपरि महत्त्व दिया गया। अंग्रेज ने इस शिक्षा के माध्यम से इस प्रकार का आभामण्डल निर्मित किया कि इस शिक्षा से शिक्षित लोगों को अपनी प्रत्येक वस्तु से हीनता का अनुभव होने लगा। इस देश के लोगों के साथ यह एक विचित्र ठगी हुई कि उनका सब कुछ लूट लिया गया और वे लुटेरों की ही जय-जयकार करने लगे। आजादी के बाद भी अरबों रूपये खर्च करके भी यहाँ तक कि विश्व बैंक के कर्ज से दबकर भी साक्षरता की वह दर नहीं प्राप्त की जा सकी है जो इस देश की परम्परागत गुरुकुल पद्धति से प्राप्त की जा सकी थी।

शिक्षा का मौलिक आधार है कि शिक्षा का उद्देश्य क्या है। महर्षि दयानन्द शिक्षा की परिभाषा देते हुए लिखते हैं – जिससे विद्या, सभ्यता, धर्मात्मता, जितेन्द्रियता आदि की बढ़ती होवे और अविद्या आदि दोष छूटें उसको शिक्षा कहते हैं। महर्षि दयानन्द ने भारतीय मनीषियों और शास्त्रों की शिक्षा की परिभाषाओं को प्रायः एक वाक्य में समाहित कर दिया है। वास्तव में शिक्षा का यही उद्देश्य है कि वह मनुष्य में मनुष्यता के गुणों का विकास करे। उसके स्तर को पशुओं से विशेष करे।

यदि शिक्षा को इस उद्देश्य को ध्यान में रखा जाएगा तो संस्कारों की बात आएगी। इस जन्म के संस्कार बच्चे को मां के गर्भ से ही मिलने प्रारम्भ हो जाते हैं। माता ही उसकी सबसे पहली शिक्षक है। माताओं को सब प्रकार की शिक्षा देने के साथ संतान के निर्माण की शिक्षा भी देनी चाहिए। मनुष्यता के लिए यह सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य है। पिता भी अपने दायित्त्व से नहीं बच सकता। सत्यार्थप्रकाश के द्वितीय समुल्लास में स्वामी दयानन्द ने माता और पिता के दायित्त्व को भली भांति निर्दिष्ट कर दिया है। शिक्षक बनने वाले व्यक्ति के व्यवहार और आचरण की जाँच को योग्यता परीक्षा से अधिक महत्त्व दिया जाना चाहिए। केवल योग्य, परोपकारी, धार्मिक संस्कारवान् व्यक्ति ही शिक्षण के व्यवसाय में जाएँ। शिक्षा में वही विषय सम्मिलित किये जाएँ जो उसकी बुद्धि, विवेकशीलता, तर्कशीलता और सबसे बढ़कर उसके आचरण को संस्कृत करें। उसे ब्रह्मचर्य, संयम, सदाचार, और धार्मिकता की शिक्षा दी जाए। पुस्तकों से ज्यादा अनुकरण को महत्त्व दिया जाए।

देश के नेताओं के मन में शिक्षा पद्धति की समीक्षा का प्रश्न है, यह अच्छी बात है। लेकिन अंग्रेज के मानस पुत्रों की चुनौतियाँ भी कम नहीं हैं। यह संकल्प की बात है। सर्वोपरि देशहित का विषय है। आजादी के बाद ही इस विषय पर विचार किया जाना चाहिए था। यदि अब भी शिक्षा पद्धति को नहीं बदला जाएगा तो फिर कब बदला जाएगा!

आपकी सम्मतियाँ

शांतिधर्मी का जुलाई अंक २८ अगस्त को मिला। बहुत प्रिय लगा। शांतिप्रवाह (सम्पादकीय) आलेख बड़ा मार्मिक है-- ठीक कहा स्वामी जी लेकिन--! सम्पादकीय ठोस यथार्थ लगा। सामयिक चिन्तन में श्री नरेन्द्र आहुजा का लेख 'सबके अलग-२ भगवान क्यों?' बहुत अच्छा है। आचार्य ज्ञानेश्वर आर्य की विदेश की चिट्ठी प्रेरणादायक लगी। शेष सभी आलेख पठनीय हैं। अंक श्रेष्ठ है।

डॉ० मनोहरदास अग्रावत एन० डी०
मनोहर आश्रम, स्थान-उम्मैदपुरा,
पोस्ट तारापुर (जावद- म० प्र०)-४५८३३० जिला नीमच

✉

शांतिधर्मी का अगस्त १४ अंक मिला। मुखपृष्ठ पर योगिराज श्रीकृष्ण का मोहक चित्र देखकर अच्छा लगा। सम्पादकीय लाजवाब है। जब तक मनुष्य की जीवनयापन की मूलभूत आवश्यकताएँ पूरी नहीं होंगी वह अपना परलोक सुधारने के बारे में सोचेगा भी कैसे? लेकिन आज स्थिति कुछ और ही हो गई है। आदमी सुबह उठने से लेकर रात को सोने तक पैसा, पैसा, हाय पैसा! को छोड़कर और कुछ सोच ही नहीं रहा। उसका पारिवारिक प्रेम, सोना, खाना सब पैसे की बलि चढ़ गया है। उसे पैसा कमाकर भी कोई आन्तरिक सुख नहीं मिलता। जब तक हम इस पर चिन्तन करके दृढ़ निश्चय नहीं करेंगे तब तक न तो यह लोक सुधरेगा और परलोक सुधरने का तो सवाल ही पैदा नहीं होता। चाणक्य नीति और अमृत वचनावली ज्ञानवर्धक हैं। नरेन्द्र आहूजा विवेक का लेख प्रेरणादायक है। रामफल सिंह आर्य के विचार झिंझोड़ने वाले हैं। सहदेव समर्पित ने रिश्वत लौटाने वाले महात्मा फूलसिंह के बारे में प्रेरक जानकारी दी है। बालवाटिका हमेशा की तरह रंग बिरंगी है।

प्रो० शामलाल कौशल
९७५-बी/२०, ग्रीन रोड, रोहतक-१२४००१

✉

अगस्त अंक में प्रकाशित सभी आलेख और कहानियाँ प्रेरक, रोचक और ज्ञानवर्धक हैं। वीरवर दुर्गादास राठौड़ और वीर शिवाजी भारत के इतिहास के हीरे हैं। देश को सदा इनसे प्रेरणा लेनी चाहिए। धर्म उसी की रक्षा करता है जो धर्म की रक्षा करते हैं।

रोहित सिंह राठौड़
जयश्री इंटरप्राईजिज, जयपुर (राजस्थान)

समाज के लिए समर्पित श्रीपाल आर्य वैदिक मिशनरी

प्रिय पाठकवृन्द! २९ जुलाई को गुरुकुल कुरुक्षेत्र में महाशय श्रीपाल आर्योपदेशक खेड़ा हटाना के दर्शन व सत्संग लाभ का सौभाग्य मिला। महाशय जी ७८ वर्ष की अवस्था में भी स्पष्ट गति व स्वर में गा लेते हैं। इनकी अद्‌भुत स्मरणशक्ति देखकर मैं हैरान रह गया। महाशय जी विधिवत् रूप से स्वामी भीष्म जी के शिष्य नहीं हैं, पर उन्हें ही अपना गुरु मानते हैं। स्वामी जी की चर्चा करते हुए वे बड़े भावुक हो गए और बोले- मैं जब स्वामी जी से पहली बार मिला, तो उन्होंने मेरी श्रद्धा और गाने की लग्न देखकर मुझसे मेरे गुरु का नाम पूछा तो मैंने कहा कि स्वामी जी मैं तो आपको ही अपना गुरु मानता हूँ। यह सुनकर स्वामी जी मेरे सिर पर हाथ रखकर बोले-मेरा आशीर्वाद है। तू एक दिन बड़ा उपदेशक बनेगा। उन्हीं के आशीर्वाद से कुछ पंक्तियाँ बना लेता हूँ और गा लेता हूँ। परमात्मा की कृपा से ऋषि दयानन्द के शिष्यों का संग मिला तो जीवन को दिशा व गति मिली। अन्यथा हम भी दूसरों की तरह पाखण्ड और अंधविश्वास में गोते लगाते रहते।

इस अवस्था में भी महाशय जी का स्वास्थ्य लगभग ठीक है, जीवन में सन्तोष है। आर्यसमाज के छोटे से छोटे कार्यकर्त्ता का भी ये सम्मान करते हैं। गुरुकुल में जब ये अपने मित्र सेवानिवृत्त प्रिंसिपल श्री त्यागी जी के साथ बैठे थे तो गुरुकुल के मुख्य संरक्षक श्री संजीव कुमार जी के मुख से मेरा नाम सुनकर एकदम खड़े हो गए और अत्यंत प्रसन्नता से मुझे गले लगा लिया। बड़े आदर से पास बैठाकर स्वामी भीष्म जी, चौ० पृथ्वीसिंह बेधड़क व स्वयं के बनाए हुए भजन सुनाने लगे। लगभग २ घंटे इनकी संगति का लाभ उठाया। मुझे बहुत अच्छा लगा।

उपदेशकों की धरोहर प्रायः बिखर जाती है, पर पूज्यपाद श्री पं० चन्द्रभानु आर्य जी सौभाग्यशाली हैं कि उनकी धरोहर को उनके सुयोग्य व समर्पित पुत्रों ने संभाल लिया है। आशा है महाशय श्रीपाल जी की धरोहर को संभालने वाला भी कोई आगे आएगा, जिससे वैदिक ज्योति जलती रहेगी। (महाशय जी का पूरा परिवार उनका अनुव्रती और वैदिक धर्म के प्रति समर्पित है। आपके सुपौत्र श्री सत्यव्रत आर्य सुयोग्य सामाजिक कार्यकर्त्ता हैं- सम्पादक)

-राजेशार्य आट्टा, कच्चा किला साढ़ौरा, यमुनानगर

सोम सरोवर (चतुर्थ खण्ड)

गायत्री छन्दः । षड्ज स्वरः

❑पं० चमूपति जी

सुरीली झांकी

अचिक्रदद्वृषा हरिर्महान्मित्रो न दर्शतः।
सं सूर्येण दिद्युते।।१।।

ऋषि- मेध्यतिथिः=पूज्य अतिथि!

(मित्रो न दर्शतः) मित्र के समान दर्शनीय (महान् हरिः) महान् चित चोर (वृषा) धर्म मेघ बन कर (अचिक्रदत्) गरजा। वह अब (सूर्येण संदिद्युते) सूर्य के साथ साथ चमक रहा है।

मेरे चित चोर मित्र! मुझे तुझ से प्यार है। आँखें दर्शन की प्यासी हैं। कान तुम्हारी सुमधुर तान सुनने को उत्सुक हैं। इसलिए कि तुम रस की मूर्त्ति हो- स्नेह स्वरूप हो।

हृदय को तुमसे एक विशेष तृप्ति मिलती है। हर रंग में तुम्हारा रंग है। हर आलाप में तुम्हारी लय है। तुम सचमुच महान् हो। मेरा अंग अंग तुम्हारी महत्ता को स्वीकार करता है। आश्चर्यचकित हो तुम्हारी महत्ता के गीत गाता है।

प्रियतम! तुम्हारी लीला न्यारी है। मेरी देह आज बारहदरी सी बन रही है। उसकी हर एक खिड़की तुम्हारे दर्शन की पिपासु है। तुम अभी मेघ बन गरज रहे थे।

मेरा रोम रोम मोर हो उठा था। ओह! कैसा सुन्दर नाच था। मेरा शरीर एक नाच घर बन रहा था। कैसा मनोहर नाद था! धर्म ने शब्द का रूप धारण किया था। ऐसा प्रभावशाली उपदेश कानों ने कभी नहीं सुना था।

मैं चुप थी तुम बोल रहे थे।
मन में मिश्री घोल रहे थे।।
ओठों पर मधु तोल रहे थे।
मेरा मौन तुम्हारी टेर!
स्वप्न सुमेरू रहा दृग घेर।।

मोहन! फिर यह क्या बात हुई कि तुम कानों को तृप्त करते करते आँखों के आगे आ गए! अँधेरे में सूर्य दिखाई देने लगा। एक विचित्र प्रभात का उदय हुआ। मेरे मन मन्दिर में उजाला छा गया। क्या यह प्रकाश तुम्हारा है?

मैं सोयी तुम खड़े जगाते।
नयनों से निज नयन मिलाते।।
शशि सम रहे प्रकाश बिखेर!
स्वप्न सुमेरू रहा दृग घेर!!

प्रभो! मैंने आवाज सुनी थी। अब दर्शन भी कर लिए। कानों के अन्दर से अब तुम्हारा गान सुनाई दे रहा है। आँखों की पुतली में अब तुम सूर्य बन चमक रहे हो। मैं तुम्हें कहाँ ढूँढने जाऊँ? मेरा नख शिख तुम्हारा गीत है। तुम्हारी मनोहर झांकी है। सुरीली झांकी! रसीला गान!!

चाणक्य-नीति

सप्तमः अध्यायः

(क्रमागत)

नाऽत्यन्तं सरलैर्भाव्यं गत्वा पश्य वनस्थलीम्।
छिद्यन्ते सरलास्तत्र कुब्जास्तिष्ठन्ति पादपाः।।१२।।

मनुष्य को अत्यंत सरल नहीं होना चाहिए, नहीं तो कोई भी उसके साथ छल कर सकता है। वन में जाकर देखो। सीधे वृक्ष काट दिए जाते हैं और टेढ़े वृक्ष खड़े रहते हैं।

यत्रोदकं तत्र वसन्ति हंसाः
तथैव शुष्कं परिवर्जयन्ति।
तथा हि तुल्येण नरेण भाव्यं
विहाय दुःखं च सुखं निवास्यम्।।१३

जिस सरोवर में पर्याप्त जल रहता है उसमें हंस निवास करते हैं। सरोवर सूख जाता है तो वे उसे छोड़ देते हैं। इसी प्रकार जहाँ दुःख की दुःख हों उस स्थान को छोड़कर वहाँ रहना चाहिए जहाँ सुख हों।

उपर्जितानां वित्तानां त्याग एव हि रक्षणम्।
तड़ागोदरसंस्थानां परीवाह इवाम्भसाम्।।१४।।

मनुष्य को उचित है कि वह कमाए गए धन का दान इत्यादि के द्वारा त्याग करता रहे, अन्यथा वह धन लाभ की अपेक्षा हानि करता है। जिस प्रकार तालाब में पानी आता जाता ही ठीक रहता है अन्यथा वह सड़ जाता है इसी प्रकार धन केवल आता आता रहे दान न किया जाए तो वह सड़ जाता है।

यस्याऽर्थास्तस्य मित्राणि
यस्याऽर्थास्तस्य बांधवाः।
यस्याऽर्थाः सः पुमाँल्लोके
यस्यार्थाः स च जीवति।।१५।।

जिस के पास धन है उसी के पास मित्र होते हैं। धन वाले के ही भाई बंधु होते हैं। धन वाले को ही पुरुषार्थी माना जाता है। जिसके पास धन है वही वास्तव में जीवित है।

अमृत वचनावली

ज्ञानशतकम्

❑डॉ० रामभक्त लांगायन आई ए एस (से० नि०)

मलेन पूरिते पात्रे न तिष्ठेन्निर्मलम् जलम्।
आत्मानन्दः कथं तिष्ठेद्विकारान्धितमानवे।।३४।।

जिस प्रकार कूड़े कर्कट से भरे ढोल में पानी शुद्ध नहीं रह सकता, उसी प्रकार विकारों से भरे हुए मनुष्य में परमात्मा रूपी आनन्द नहीं आ सकता।

वाक्ये मुख्यः रसास्वादो भाक्तं व्याकरणं मतम्।
भावमुख्याः कबीराद्याः पाणिनीयैः सुपूजिताः।।३५

शब्दों की महत्ता इस बात में नहीं है कि अच्छे छंद और अलंकार में हैं। उनकी महत्ता इस बात में है कि वे किस आदमी के हैं और उनमें अर्थगाम्भीर्य है या नहीं! कबीर रैदास आदि के शब्द व्याकरण की दृष्टि से कम हो सकते हैं लेकिन भाव की दृष्टि से उनका स्थान अनुपम है।

शक्तिश्शक्तिमतां भोगा विविधा न हरन्ति यम्।
जितात्मा स सदादर्शः स लोके परमो मतः।।३६।।

जिसे बाहरी शक्तियाँ, विषय वासनाएँ प्रभावित नहीं कर सकतीं, वह व्यक्ति जितात्मा है और ऐसा व्यक्ति ही दूसरों को प्रभावित कर सकता है।

एकेन्द्रियस्यास्वादपरा विनष्टा
द्विप-द्विरेफ-मृग-मीन-कीटाः।
पंचेन्द्रियास्वादपरो नितान्तं
नरः कथं स्याद्वशगो न मृत्योः।।

गज, भंवरा, हिरण, मछली, पतंगा अपने एक इन्द्रिय स्वाद से पतन को प्राप्त हो जाते हैं, मनुष्य तो शब्द, स्पर्श, रूप आदि पाँचों स्वादों के वश में है। वह कैसे बच सकेगा?

ब्रह्मविद्या कौन प्राप्त कर सकता है

❒सहदेव समर्पित दर्शनाचार्य

मनुष्य जीवन का उद्देश्य ईश्वर आज्ञा के अनुकूल आचरण करते हुए इस लोक और परलोक के सब दु:खों से छूटकर परमगति अर्थात् मोक्ष को प्राप्त करना है। वह मोक्ष अथवा मुक्ति ब्रह्म विद्या के बिना प्राप्त नहीं की जा सकती। यजुर्वेद में कहा गया है- विद्ययाऽमृतमश्नुते। अर्थात् विद्या से अमरत्व प्राप्त किया जाता है। ब्रह्म विद्या ही वास्तव में विद्या है। ब्रह्म विद्या को वही प्राप्त कर सकता है जो इसका पात्र है।

उपनिषद् में एक प्रकरण आता है। नारद मुनि महर्षि सनत्कुमार से प्रार्थना करते हैं कि मुझे ब्रह्म विद्या का उपदेश कीजिए। महर्षि पूछते हैं- तुमने अब तक क्या-क्या पढ़ा है? नारद वेद-शास्त्रों, ब्राह्मण-ग्रंथों व अनेक लौकिक विषयों को गिनाकर कहते हैं कि मैंने ये सब पढ़े हैं किंतु मैं शब्द ही जानता हूँ, ब्रह्म को नहीं जानता। महर्षि उनको ब्रह्म विद्या का उपदेश करते हैं। इस प्रकरण से यह ज्ञात होता है कि केवल बहुत से ग्रंथों को पढ़ने से कोई ब्रह्म को नहीं जान सकता। इसके लिए साधक को अपने आप में पात्र बनना होता है। पात्रता के बिना योग्यता अथवा सामर्थ्य नहीं मिलती है।

शास्त्रों में विद्या प्राप्ति के चार उपाय बताए गए हैं-

गुरु शुश्रूषया विद्या विपुलेन धनेन वा।
अथवा विद्यया विद्या चतुर्थी नैव विद्यते।।

1-गुरु शुश्रूषा- श्रद्धापूर्वक गुरु के वचनों का श्रवण और तदनुकूल आचरण। 2- विपुल धन से 3- विद्या से भी विद्या प्राप्त की जा सकती है। इनमें सर्वश्रेष्ठ उपाय गुरु की श्रद्धापूर्वक सेवा और उपदेश ग्रहण ही है। गुरु के उपदेश से भी वही जिज्ञासु विद्या ग्रहण कर सकता है, जिसके अंदर जिज्ञासा का भाव कूट-कूटकर भरा हुआ हो। बिना भूख के तो भोजन भी अच्छा नहीं लगता। जिज्ञासु के अंदर ब्रह्म प्राप्ति की भूख होनी चाहिए। अन्यथा वह गुरु के उपदेश से भी विद्या प्राप्त नहीं कर सकता।

अब प्रश्न यह है कि वह पात्रता क्या है? जिसके होने पर ही ब्रह्म विद्या प्राप्त की जा सकती है। निरुक्तकार आचार्य यास्क ने उद्धरण देते हुए इसकी ओर संकेत किया है-

विद्या ह ब्राह्मणम् आजगाम
गोपाय मा शेवधिष्टे अहमस्मि।
असूयकायानृजवे अयताय न मा ब्रूया:।।

अर्थात् विद्या ब्रह्मवेत्ता को कहती है कि मुझे सफल, सार्थक करना है तो इन तीन प्रकार के व्यक्तियों को मुझे मत देना। 1- असूयकाय 2- अनृजवे 3- अयताय। अर्थात् ये तीन प्रकार के व्यक्ति विद्या प्राप्त नहीं कर सकते चाहे गुरु भी कितना ही प्रयास कर ले। असूयकाय - जिसका तन-मन ईर्ष्या से भरा हुआ है। अनृजव: - जो सरल नहीं कुटिल है, जिसके मन में पाप भरा हुआ है। अयताय- जो प्रयत्न नहीं करता, अर्थात् गुरु के वचनों पर श्रद्धा करके उसके अनुसार कोई परिश्रम नहीं करना चाहता। भाव यह है कि ईर्ष्या रहित, सभी प्राणियों से प्रेम भाव रखने वाले, शुद्ध हृदय वाले और पुरुषार्थी व्यक्ति ही ब्रह्म विद्या को प्राप्त कर सकते हैं।

मुण्डकोपनिषद् में इसको और विस्तार दे दिया गया है। ब्रह्म विद्या कौन प्राप्त कर सकता है-

क्रियावन्त: श्रोत्रिया: ब्रह्मनिष्ठा: एकर्षि श्रद्धयन्त:।
शिरोव्रतं विधिवद् यैस्तु चीर्णम्।।

जो क्रियावान हैं, अर्थात् कहने में ही नहीं, करने में भी विश्वास करते हैं, जो कहते हैं, उस पर आचरण भी करते हैं। वेद को जानने वाले हैं। ब्रह्म अर्थात् परमेश्वर में जिनका अटल विश्वास है, जो जिज्ञासु हैं, ऋषि वचनों पर श्रद्धा रखते हैं और जो धर्म के व्रत का पालन करते हैं, वही इस ब्रह्म विद्या को ग्रहण कर सकते हैं।

जैसे एक कहावत है- हाथी के पांव में सबका पांव। इसी प्रकार सार रूप में श्वेताश्वतरोपनिषद् में कहा गया है-

यस्य देवे परा भक्ति यथा देवे तथा गुरौ।
तस्यैते कथिता हि अर्था: प्रकाशन्ते महात्मन:।।

ब्रह्म विद्या के रहस्य को वही व्यक्ति जान सकता है, जिसकी भगवान में परम भक्ति होती है तथा जैसी भगवान में भक्ति वैसी ही श्रद्धा गुरु में होती है।

वास्तव में ब्रह्म विद्या को वही प्राप्त कर सकता है जो ब्रह्म के प्रति पूर्णतया समर्पित है। जिसने परमेश्वर की आज्ञा पालन रूपी धर्म को अपने आचरण में आत्मसात् कर लिया है। जो प्रत्येक कर्म करने से पूर्व यह देखते हैं कि वह अन्तरात्मा की आवाज के अनुकूल है या नहीं। जो जागते सोते, उठते-बैठते, खाते-पीते, लोकव्यवहार करते- परमेश्वर के सर्वव्यापक, न्यायकारी, सच्चिदानन्दस्वरूप का ध्यान करते हैं, वे उत्तरोत्तर अपने आत्मा की उन्नति करते हुए ब्रह्म विद्या के रहस्य को प्राप्त कर लेते हैं।

हिन्दी के प्रचार प्रसार में महर्षि दयानन्द का योगदान

❒**मनमोहन कुमार आर्य,** 196 चुक्खूवाला- 2 देहरादून -248001 फोन : 09412985121

जो व्यक्ति जिस देशभाषा को पढ़ता है उसको उसी का संस्कार होता है।

भारतवर्ष के इतिहास में महर्षि दयानन्द पहले व्यक्ति हैं जिन्होंने अहिन्दी भाषी गुजराती होते हुए पराधीन भारत में सबसे पहले राष्ट्रीय एकता एवं अखण्डता के लिए हिन्दी को सर्वाधिक महत्वपूर्ण जानकर मन, वचन व कर्म से इसका प्रचार-प्रसार किया। उनके प्रयासों का ही परिणाम था कि हिन्दी, जिसे स्वामी दयानन्द जी ने आर्यभाषा का नाम दिया, शीघ्र लोकप्रिय हो गई। स्वतन्त्र भारत में संविधान सभा द्वारा 14 सितम्बर 1949 को सर्व सम्मति से हिन्दी को राजभाषा स्वीकार किया जाना भी स्वामी दयानन्द के इससे 77 वर्ष पूर्व आरम्भ किए गये कार्यों का ही सुपरिणाम था। प्रसिद्ध हिन्दी साहित्यकार विष्णु प्रभाकर राष्ट्रीय जीवन के अनेक पहलुओं पर स्वामी दयानन्द का अक्षुण्ण प्रभाव स्वीकार करते हैं और हिन्दी पर साम्राज्यवादी होने के आरोपों को अस्वीकार करते हुए कहते हैं कि यदि साम्राज्यवाद शब्द का हिन्दी वालों पर कुछ प्रभाव है भी, तो उसका सारा दोष अहिन्दी भाषियों का है। इन अहिन्दीभाषियों का अग्रणीय वे स्वामी दयानन्द को मानते हैं और लिखते हैं कि इसके लिए उन्हें प्रेरित भी किसी हिन्दी भाषी ने नहीं अपितु एक बंगाली सज्जन श्री केशव चन्द्र सेन ने किया था।

गुजराती उनकी स्वाभाविक रूप से मातृभाषा थी। उनका अध्ययन-अध्यापन संस्कृत में हुआ। इसी कारण वे संस्कृत में ही वार्तालाप, व्याख्यान, लेखन, शास्त्रार्थ, शंका-समाधान आदि किया करते थे। 16 दिसम्बर, 1872 को स्वामीजी वैदिक मान्यताओं के प्रचारार्थ भारत की तत्कालीन राजधानी कलकत्ता पहुंचे थे और वहाँ उन्होंने अनेक सभाओं में व्याख्यान दिये। ऐसी ही एक सभा में स्वामी दयानन्द के संस्कृत भाषण का बंगला में अनुवाद गवर्नमेन्ट संस्कृत कालेज, कलकत्ता के उपाचार्य पं. महेशचन्द्र न्यायरत्न कर रहे थे। दुभाषिये वा अनुवादक का धर्म वक्ता के आशय को स्पष्ट करना होता है परन्तु श्री न्यायरत्न महाशय ने स्वामीजी के वक्तव्य को अनेक स्थानों पर उनके आशय के विपरीत प्रकट किया जिससे व्याख्यान में उपस्थित संस्कृत कालेज के छात्रों ने उनका विरोध किया। विरोध के कारण श्री न्यायरत्न बीच में ही सभा छोड़कर चले गये थे। प्रसिद्ध ब्रह्मसमाजी नेता श्री केशवचन्द्र सेन भी इस सभा में उपस्थित थे। बाद में इस घटना का विवेचन कर उन्होंने स्वामीजी को सुझाव दिया कि वे संस्कृत के स्थान पर लोकभाषा हिन्दी को अपनायें। गुण ग्राहक स्वभाव वाले स्वामी दयानन्द जी ने तत्काल यह सुझाव स्वीकार कर लिया। यह दिन हिन्दी के इतिहास की एक प्रमुख घटना थी कि जब एक संस्कृत के अद्वितीय विद्वान 48 वर्षीय गुजराती मातृभाषी ने हिन्दी को अपना लिया। ऐसा दूसरा उदाहरण इतिहास में अनुपलब्ध है।

सत्यार्थप्रकाश स्वामीजी की प्रसिद्ध रचना है जो देश-विदेश में विगत 139 वर्षों से उत्सुकता एवं श्रद्धा से पढ़ी जाती है। फरवरी, 1872 में हिन्दी को स्वीकार करने के लगभग 2 वर्ष पश्चात् ही स्वामीजी ने 2 जून 1874 को उदयपुर में इसका प्रणयन आरम्भ किया और लगभग 3 महीनों में पूरा कर डाला। श्री विष्णु प्रभाकर इतने अल्प समय में स्वामीजी द्वारा हिन्दी में सत्यार्थ प्रकाश जैसा उच्च कोटि का ग्रन्थ लिखने पर इसे आश्चर्यजनक घटना मानते हैं। सत्यार्थ प्रकाश के पश्चात् वेदों एवं वैदिक सिद्धान्तों के प्रचारार्थ स्वामीजी ने अनेक ग्रन्थ लिखे जो सभी हिन्दी में हैं। उनके ग्रन्थ उनके जीवनकाल में ही देश की सीमा पार कर विदेशों में भी लोकप्रिय हुए। विश्वविख्यात विद्वान प्रो. मैक्समूलर ने स्वामी दयानन्द की पुस्तक ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका पढ़कर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए लिखा कि वैदिक साहित्य का आरभ ऋग्वेद से एवं अन्त स्वामी दयानन्द जी की ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका पर होता है। स्वामी दयानन्द के सत्यार्थप्रकाश एवं अन्य ग्रन्थों को इस बात का गौरव प्राप्त है कि धर्म, दर्शन एवं संस्कृति जैसे क्लिष्ट विषय को सर्व

प्रथम उनके द्वारा हिन्दी में प्रस्तुत कर उसे सर्व जनसुलभ किया। जबकि इससे पूर्व इस पर संस्कृत निष्णात ब्राह्मण वर्ग का ही अधिकार था, जिसने इन्हें संकीर्ण एवं संकुचित कर दिया था।

यह उल्लेखनीय है कि ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका संस्कृत व हिन्दी दोनों भाषाओं में है। दोनों भाषाओं के देवनागरी लिपि में होने के कारण प्रो. मैक्समूलर व इस ग्रन्थ के अन्य पाठकों व विद्वानों का हिन्दी से परिचय हो गया था। हिन्दीतर संस्कृत विद्वानों को हिन्दी से परिचित कराने हेतु स्वामीजी की यह अनोखी सूझ महत्वपूर्ण एवं अनुकरणीय है। इसी पद्धति को उन्होंने अपने वेद भाष्य में भी अपनाया है।

थियोसोफिकल सोसायटी की नेत्री मैडम बैलेवेटेस्की ने स्वामी दयानन्द से उनके ग्रन्थों के अंग्रेजी अनुवाद की अनुमति मांगी तो स्वामी दयानन्द जी ने 31 जुलाई 1879 को विस्तृत पत्र लिखकर उन्हें अनुवाद से हिन्दी के प्रचार-प्रसार एवं प्रगति में आने वाली बाधाओं से परिचित कराया। स्वामीजी ने लिखा कि अंग्रेजी अनुवाद सुलभ होने पर देश-विदेश में जो लोग उनके ग्रन्थों को समझने के लिए संस्कृत व हिन्दी का अध्ययन कर रहे हैं, वह समाप्त हो जायेगा। हिन्दी के इतिहास में शायद कोई विरला ही व्यक्ति होगा जिसने अपनी हिन्दी पुस्तकों का अनुवाद इसलिए नहीं होने दिया कि पाठक हिन्दी सीखने से विरत न हों जाएँ।

हरिद्वार में एक बार व्याख्यान देते समय पंजाब के एक श्रद्धालु भक्त द्वारा स्वामीजी से उनकी पुस्तकों का उर्दू में अनुवाद कराने की प्रार्थना करने पर उन्होंने आवेशपूर्ण शब्दों में कहा था कि अनुवाद तो विदेशियों के लिए हुआ करता है। देवनागरी के अक्षर सरल होने से थोड़े ही दिनों में सीखे जा सकते हैं। हिन्दी भाषा भी सरल होने से आसानी से कुछ ही समय में सीखी जा सकती है।

हिन्दी न जानने वाले एवं इसे सीखने का प्रयत्न न करने वालों से उन्होंने पूछा कि जो व्यक्ति इस देश में उत्पन्न होकर यहाँ की भाषा हिन्दी को सीखने में परिश्रम नहीं करता उससे और क्या आशा की जा सकती है? श्रोताओं को सम्बोधित कर उन्होंने आगे कहा, ''आप तो मुझे अनुवाद की सम्मति देते हैं परन्तु दयानन्द के नेत्र वह दिन देखना चाहते हैं जब कश्मीर से कन्याकुमारी और अटक से कटक

प्रसिद्ध साहित्यकार स्व. मुन्शी प्रेमचन्द के उद्‌गार

आर्यभाषा सम्मेलन आर्यसमाज लाहौर के वार्षिक उत्सव पर दिया गये भाषण के अंश

मैं आर्यसमाज को जितनी धार्मिक संस्था मानता हूँ उतनी ही सांस्कृतिक संस्था भी समझता है। बल्कि क्षमा करें उसके सांस्कृतिक कारनामे-धार्मिक से ज्यादा प्रसिद्ध हैं और रोशन हैं। आर्यसमाज ने यह साबित कर दिखाया है कि सेवा का रचनात्मक कार्यक्रम ही किसी धर्म के सजीव होने का लक्षण है। समाजसेवा का कौन सा क्षेत्र है, जिसमें उसकी कीर्ति-ध्वजा न उड़ी हो। राष्ट्रीय जीवन की समस्याओं को हल करने में उसने जिस दूरंदेशी का सबूत दिया है उस पर हम गर्व कर सकते हैं। हरिजनों का उद्धार, लड़कियों की शिक्षा के लिए सबसे पहले उसी ने कदम उठाया। वर्ण व्यवस्था को जन्मगत न मान कर कर्मगत सिद्ध करने का सेहरा भी आर्यसमाज को है। जातिपाँति, भेदभाव, खानपान को छुआछूत-चौका-चूल्हा तक ही धर्म की श्रेष्ठता को सीमित रखने के विरुद्ध प्रचार करना उसके प्रवर्तक स्वामी दयानन्द का ही प्रताप है। उसने प्रगतिशील एक पक्ष को बड़े साहस से रखा इसलिए उसका असर सारी कौम पर है। ब्रह्मसमाज ने हालांकि पहले कदम रखा था समाज सुधार के लिए, मगर वह अंग्रेजी पढ़े-लिखे लोगों तक ही सीमित रह गया। ब्रह्मसमाज एवं राजा राममोहनराय का प्रभाव तो पड़ा लेकिन उनके विचारों का मूल स्रोत नहीं था विदेशी नकल अधिक थी, लेकिन स्वामी दयानन्द एक अपना मौलिक दृष्टिकोण, जैसे मुल्क का ही पक्ष लेकर आए हों।

सबसे बड़ी बात यह है कि समाज के मानसिक और बौद्धिक धरातल को स्वामी दयानन्द यानी आर्यसमाज ने जितना ऊंचा उठाया है और किसी संस्थान ने नहीं, इसका कोई सुधारवादी तहरीक मुकाबला नहीं कर सकती। वेदों और ऊंचे ज्ञान को जनसाधारण की सम्पत्ति बना दिया जिन पर पंडितों ने कई-कई लीवर के ताले लगा रखे थे। स्वामी दयानन्द का एक बड़ा उपकार कौमी जबान को है। उन्होंने ही तब महसूस किया और उसे कर दिखाया जब इसका माहौल ऐसा नहीं था। गुजराती होते हुए उन्होंने राष्ट्रभाषा की अहमियत को समझा और अपना मशहूर ग्रंथ सत्यार्थप्रकाश हिन्दी में ही लिखा। इसलिए शिक्षा-साक्षरता-यानि भाषा के क्षेत्र में भी आर्यसमाज एवं महर्षि का योगदान अभूतपूर्व है।

तक देवनागरी अक्षरों का प्रचार होगा।'' इस स्वर्णिम स्वप्न के द्रष्टा स्वामी दयानन्द ने अपने ग्रन्थों में एक स्थान पर लिखा कि आर्यावर्त्त (भारत का प्राचीन नाम) भर में भाषा के एक्य सम्पादन करने के लिए ही उन्होंने अपने सभी ग्रन्थों को आर्य भाषा (हिन्दी) में लिखा एवं प्रकाशित किया है। अनुवाद के संबंध में अपने हृदय में हिन्दी के प्रति सम्पूर्ण प्रेम को प्रकट करते हुए वे लिखते हैं, ''जिन्हें सचमुच मेरे भावों को जानने की इच्छा होगी, वे इस आर्यभाषा को सीखना अपना कर्तव्य समझेंगे।'' यही नहीं आर्यसमाज के प्रत्येक सदस्य के लिए उन्होंने हिन्दी सीखना अनिवार्य किया था। भारतवर्ष की तत्कालीन अन्य संस्थाओं में हम ऐसी कोई संस्था नहीं पाते जहाँ एकमात्र हिन्दी के प्रयोग का आग्रह रहा हो।

सन् 1882 में ब्रिटिश सरकार ने डॉ. हण्टर की अध्यक्षता में एक कमीशन की स्थापना कर इससे राजकार्य के लिए उपयुक्त भाषा की सिफारिश करने को कहा। यह आयोग हण्टर कमीशन के नाम से जाना गया। यद्यपि उन दिनों सरकारी कामकाज में उर्दू-फारसी एवं अंग्रेजी का प्रयोग होता था परन्तु स्वामी दयानन्द के सन् 1872 से 1882 तक व्याख्यानों, पुस्तकों वा ग्रन्थों, शास्त्रार्थों तथा आर्यसमाजों द्वारा मौखिक प्रचार एवं उसके अनुयायियों की हिन्दी निष्ठा से हिन्दी भी सर्वत्र लोकप्रिय हो गई थी। इस हण्टर कमीशन के माध्यम से हिन्दी को राजभाषा का स्थान दिलाने के लिए स्वामीजी ने देश की सभी आर्यसमाजों को पत्र लिखकर बड़ी संख्या में हस्ताक्षरयुक्त ज्ञापन भेजने की प्रेरणा की और जहाँ से ज्ञापन नहीं भेजे गये उन्हें स्मरण पत्र भेज कर सावधान किया। आर्यसमाज फर्रूखाबाद के स्तम्भ बाबू दुर्गादास को भेजे पत्र में स्वामीजी ने लिखा, ''यह काम एक के करने का नहीं है और चूक (भूल-चूक) होने पर वह अवसर पुन: आना दुर्लभ है। जो यह कार्य सिद्ध हुआ (अर्थात् हिन्दी राजभाषा बना दी गई) तो आशा है कि मुख्य सुधार की नींव पड़ जायेगी।'' स्वामीजी की प्रेरणा के परिणामस्वरूप आर्यसमाजों द्वारा देश के कोने-कोने से आयोग को बड़ी संख्या में लोगों के हस्ताक्षर कराकर ज्ञापन भेजे गए। कानपुर से हण्टर कमीशन को दो सौ मैमोरियल भेजे गए जिन पर दो लाख लोगों ने हिन्दी को राजभाषा बनाने के पक्ष में हस्ताक्षर किए थे। हिन्दी को गौरव प्रदान करने के लिए स्वामी दयानन्द द्वारा किया गया यह कार्य भी इतिहास में अन्यतम घटना है। हमें इस सन्दर्भ में दु:ख के साथ कहना पड़ रहा है कि हिन्दी के विद्वानों ने स्वामी दयानन्द के इस योगदान की जाने अनजाने घोर उपेक्षा की है। हमें इसमें उनके पक्षपातपूर्ण व्यवहार की गन्ध आती है।

स्वामी दयानन्द की प्रेरणा से अनेक लोगों ने हिन्दी सीखी। इन प्रमुख लोगों में जहाँ अनेक रियासतों के राजपरिवारों के सदस्य हैं वहीं कर्नल एच.एस. आल्काट आदि विदेशी महानुभाव भी हैं जो इंग्लैण्ड में स्वामीजी की प्रशंसा सुनकर उनसे मिलने भारत आये थे। यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि शाहपुरा, उदयपुर, जोधपुर आदि अनेक स्वतन्त्र रियासतों के महाराजा स्वामी दयानन्द के अनुयायी थे और स्वामीजी की प्रेरणा पर उन्होंने अपनी रियासतों में हिन्दी को राजभाषा का दर्जा दिया।

स्वामी दयानन्द संस्कृत व हिन्दी के अतिरिक्त अन्य भाषाओं का भी आदर करते थे। उन्होंने सत्यार्थप्रकाश में लिखा है कि जब पुत्र-पुत्रियों की आयु पाँच वर्ष हो जाये तो उन्हें देवनागरी अक्षरों का अभ्यास करायें, अन्य देशीय भाषाओं के अक्षरों का भी। स्वामीजी अन्य प्रादेशिक भाषाओं को हिन्दी व संस्कृत की भांति देवनागरी लिपि में लिखे जाने के समर्थक थे जो राष्ट्रीय एकता की पूरक है।

अपने जीवनकाल में हिन्दी पत्रकारिता को भी आपने नई दिशा दी। आर्य दर्पण (शाहजहांपुर, 1878), आर्य समाचार (मेरठ : 1878), भारत सुदशा प्रवर्तक (फर्रूखाबाद : 1879), देश हितैषी (अजमेर : 1882) आदि अनेक हिन्दी पत्र आपकी प्रेरणा से प्रकाशित हुए एवं पत्रों की संख्या में उत्तरोत्तर वृद्धि होती गई।

स्वामी दयानन्द ने हिन्दी में जो पत्रव्यवहार किया वह भी संख्या की दृष्टि से किसी एक व्यक्ति द्वारा किए गए पत्र-व्यवहार में सर्वाधिक है। स्वामीजी के पत्र व्यवहार की खोज, उनकी उपलब्धि एवं सम्पादन कार्य में स्वामी श्रद्धानन्द, प्रसिद्ध वैदिक रिसर्च स्कालर पं. भगवद्दत्त, पं. युधिष्ठिर मीमांसक एवं श्री मामचन्द जी का विशेष योगदान रहा है। सम्प्रति स्वामीजी का समस्त पत्र-व्यवहार चार खण्डों में पं. युधिष्ठिर मीमांसक के सम्पादन में प्रकाशित है जो रामलाल कपूर ट्रस्ट, रेवली, सोनीपत-हरयाणा से उपलब्ध है। इस पत्र व्यवहार का सम्प्रति दूसरा संस्करण ट्रस्ट से उपलब्ध है। स्वामी दयानन्द इतिहास में पहले व्यक्ति हैं जिन्होंने अहिन्दी

(शेष पृष्ठ ३३ पर)

शिक्षा के ढांचे में सुधार की आवश्यकता

❑एस. शंकर

हमें उस घातक प्रवृत्ति पर सोचना चाहिए जो केवल धन कमाने के प्रशिक्षण को ही 'शिक्षा' का पर्याय बना रही है।

प्रधानमंत्री के शिक्षक दिवस संबोधन के बाद मानव संसाधन मंत्री स्मृति ईरानी द्वारा नई शिक्षा नीति की तैयारी की घोषणा स्वागत योग्य है। यह आशा जगाती है कि शिक्षा में नई सरकार धीरे-धीरे, किंतु सार्थक कदम उठा सकती है। किंतु ऐसा हो सके, इसके लिए तीन बातों पर ध्यान देना जरूरी है। पहला- दिखावे की बातों में न पड़ना। यह कहना इसलिए जरूरी है, क्योंकि विगत कई दशकों से शिक्षा विमर्श और परिणामस्वरूप शिक्षा दस्तावेज भी प्राय: हर तरह की बनावटी बातों से भरे रहे हैं। अत: नया शिक्षा-दस्तावेज बनाने में दिखावे वाली और कागजी लफ्फाजी से बचना नई शिक्षा नीति का मुख्य लक्ष्य होना चाहिए। यह संभव है, यह प्रधानमंत्री के पांच सितंबर वाले उद्बोधन से दिखता है। उन्होंने बड़ी-बड़ी, किताबी किस्म की बातों से हटकर सीधी-सादी, समझ में आने लायक, क्रियान्वित की जाने वाली बातें ही कही। यही नई शिक्षा नीति में भी होना चाहिए।

दूसरी इसी से जुड़ी बात है कि नकली उपलब्धियों का आंकड़ा दिखाना हमारे शिक्षा कार्यक्रमों का उद्देश्य नहीं होना चाहिए। शिक्षा आंकड़े अविश्वसनीय हैं। उदाहरण के लिए कहा जाता है कि अमुक राज्य में इस वर्ष इतने लाख बच्चों ने आठवीं कक्षा पास की। किंतु वास्तविकता क्या है? उन बच्चों में कई लाख ऐसे हैं जिन्हें अपना नाम लिखना भी नहीं आता। इस दुर्गति का कारण यह है कि वर्षों पहले यह विचित्र निर्देश जारी किया गया कि किसी बच्चे की आठवीं कक्षा तक प्रोन्नति न रोकी जाए। यह नि:संदेह वैसे ही शिक्षा शास्त्रियों की सलाह पर किया गया होगा जिन्हें विदेशी अंध-नकल की आदत है। आशा करें, नई सरकार ऐसे शिक्षा शास्त्रियों से बचेगी। हमें वास्तविक शिक्षित बच्चे और युवा चाहिएँ। यही कॉलेजों, विश्वविद्यालयों के लिए भी सही है। हम स्वयं को, अपने बच्चों को और दुनिया को धोखा दे रहे हैं। यह तो हमारे देश की विशाल आबादी है, जिससे यह घृणित, लज्जाजनक और बचकानी धोखाधड़ी छिपी रही है।

तीसरी बात है शिक्षा और रोजगार-ट्रेनिंग का घालमेल। यह साफ साफ समझ लिया जाना चाहिए कि हरेक युवा को रोजगार की जरूरत और उसका शिक्षित होना अलग-अलग बातें हैं। अशिक्षित व्यक्ति भी बड़े भारी रोजगार का संचालक हो सकता है और बढ़िया रोजगार में लगा हुआ व्यक्ति भी अशिक्षित हो सकता है। इस नाजुक बिंदु को ठीक-ठीक समझने का अवसर आ गया है। नहीं तो हम कभी न समझ सकेंगे कि तरह-तरह के घोटालों, गड़बड़ियों, व्यभिचार आदि में लगे हुए लोगों में कथित सुशिक्षित लोगों की संख्या इतनी बड़ी क्यों है? उम्मीद है कि नई शिक्षा नीति में संस्कारों की शिक्षा यानी वास्तविक शिक्षा को रेखांकित किया जाएगा। राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् यानी एनसीईआरटी का ध्येय वाक्य है-'विद्ययामृतमश्नुते'। हमारे बड़बोले बौद्धिकों और शिक्षाशास्त्रियों में बिरले ही होंगे जो इसका अर्थ या स्रोत भी बता सकें। यह उदाहरण है कि हमारा चालू शिक्षा-विमर्श और शिक्षा योजनाएँ आदि बनाने वाले कितने खोखले हैं। अभी जाने-माने भारतीय शिक्षाविद् कहे जाने वाले कई लोग 'हमारा धर्म-चिंतन', 'संस्कार', 'भारतीय गौरव', 'देशभक्ति' जैसे शब्दों का उल्लेख होते ही संकोच में पड़ जाते हैं। उनके विमर्श, लेखन, दस्तावेज आदि में 'डाइवर्सिटी' 'मायनोरिटी', 'सेक्युलरिज्म', 'जेंडर', 'मल्टी-कल्चरल' जैसे जुमलों का दर्जनों बार प्रयोग सुना जा सकता है। किंतु सत्यनिष्ठा, सेवा, अनुशासन, संयम, शौर्य, देश-रक्षा आदि का एक बार भी नहीं। यह मतवादीकरण ही है कि बच्चों की शिक्षा में अनेक महापुरुषों की सुचिंतित सीख को जान बूझकर उपेक्षित किया गया है। जैसे- विवेकानंद ने कहा था- संस्कृत शब्दों में अद्भुत शक्ति भरी हुई है। उनके उच्चारण मात्र से शक्ति का बोध होता है। उपनिषद्, रामायण, महाभारत जैसे कालजयी शास्त्र विश्व की अनमोल धरोहरों में गिने जाते हैं। उनका पठन-पाठन एक जीवंत सत्संग है जिससे विवेक ही नहीं, शक्ति भी मिलती है।

(शेष पृष्ठ ३२ पर)

देश की रक्षा कौन करेगा!

❑**रामफल सिंह आर्य**, चलभाष 094184 77714,

गतांक में आपने पश्चिम की अपसंस्कृति और भौतिकता की अंधी दौड़ के दुष्परिणामों के बारे में पढ़ा था। उसी संदर्भ में विद्वान् लेखक कुछ अन्य ज्वलंत मुद्दों पर प्रकाश डाल रहे हैं।

दोषयुक्त शिक्षा पद्धति :

समाज के बिगड़ने का यह तीसरा भी बहुत बड़ा कारण है। शिक्षा ही किसी राष्ट्र की रीढ़ की हड्डी हुआ करती है जिसके सहारे राष्ट्र आगे बढ़ता है। शिक्षा केवल कुछ पुस्तकें पढ़ लेने, डिग्रियाँ प्राप्त कर लेने या कुछ कमाने योग्य होकर किसी नौकरी को प्राप्त कर लेने का नाम नहीं है। शिक्षा राष्ट्र–निर्माण का वह साधन है जिसके द्वारा हम एक सूत्र में अनुशासन पूर्वक बंधते हैं। यह केवल कुछ सूचनायें इकट्ठी कर लेने का नाम नहीं है, अपितु एक ऐसा पवित्र एवं श्रेष्ठ साधन है जो यह सिखाता है कि संसार में सभी हमारे भाई–बंधु हैं, हमें सभी के कल्याण के लिए कार्य करना चाहिये। महर्षि दयानन्द के शब्दों में– 'जिससे विद्या, सभ्यता, जितेन्द्रियता एवं सुशीलता आदि गुणों की वृद्धि होकर अविद्या आदि दोष छूटें, उसे शिक्षा कहते हैं।' यह एक ऐसी कसौटी है जिस पर जांच परख करने के उपरान्त अपनाया गया साधन समाज का महान कल्याण करने वाला होगा, जिसमें दीक्षित हुए स्नातक वास्तव में राष्ट्र के भक्त एवं उसके लिए बलिदान होने वाले बनेंगे।

आप स्वयं जाँच करके देख लें कि आज की शिक्षा उपर्युक्त मंत्र पर खरी उतरती है या नहीं? आज न तो यह परिभाषा शिक्षाविदों को पता है, न शिक्षकों को, न देश के भाग्य विधाताओं को। जब इन्हीं को पता नहीं तो फिर बेचारे पढ़ने वालों को तो पता ही क्या होगी? आधुनिक शिक्षा पद्धति में यह भयानक दोष है कि वह न तो नैतिक उत्थान के बारे में कुछ कहती है, न देश भक्ति के बारे में और न ही व्यक्ति को सभ्य बनाती है। क्या आप देश के किसी भी महाविद्यालय का नाम बता सकते हैं जहाँ पर ब्रह्मचर्य, चरित्र–निर्माण, देशभक्ति या ईश्वरभक्ति की शिक्षा दी जाती हो। यदि कोई कहे कि वह ब्रह्मचारी है तो उसका उपहास उड़ाया जाता है। फिर किस आधार पर हम आने वाले समय में सुनहरे स्वप्न देखने का साहस कर सकते हैं? विद्यालयों से लेकर महाविद्यालयों, विश्वविद्यालयों, तकनीकी शिक्षा के महाविद्यालयों आदि में सर्वत्र स्वतन्त्र प्रवृत्ति की मशीनें तैयार की जा रही हैं जो केवल पैसा तो येन केन प्रकारेण कमा सकती है परन्तु राष्ट्र का निर्माण या रक्षा....यह तो बहुत दूर की बात है। शिक्षा आज व्यवसाय बन चुका है, ऐसा व्यवसाय जिसमें केवल लाभ ही लाभ है हानि कुछ भी नहीं है। यह पद्धति अत्यन्त दोषयुक्त है। इसका प्रमाण एवं परिणाम दोनों आपके सामने हैं। किसी भी महाविद्यालय में चले जाईये, कुछ नहीं पता कि वहाँ कब जिन्दाबाद मुदार्बाद के नारे लग जायें, कब तोड़–फोड़ हो जाये कब आग लग जाये, कब अध्यापकों का अपमान हो जाये, कितने अनैतिक कार्य वहाँ पर मिल जायें। नशा, चोरी, लड़ाई–झगड़ा, लड़कियों से दुर्व्यवहार। एक परीक्षण करके देख लेना किसी महाविद्यालय में जाकर वहाँ पढ़ने वाले लड़कों से पूछ कर देख लेना कि ये लड़कियाँ जो तुम्हारे साथ पढ़ती हैं, तुम्हारी क्या लगती हैं? उत्तर आपको चौंकाने वाले होंगे। क्या इसलिये विद्यालय जाते हैं बच्चे? क्या आपकी प्राचीन गौरवमयी परम्पराओं की रक्षा हो रही है? क्या आपकी सभ्यता एवं संस्कृति की रक्षा हो रही है? यदि नहीं तो फिर किस आधार पर यह स्वप्न देखते हो कि वहाँ से राष्ट्र की रक्षा करने वाले निकलेंगे।

लार्ड मैकाले के मानस पुत्रों से और भला क्या आशा की जा सकती है? कहाँ गुरु की एक आज्ञा पर निःस्वार्थ भाव से सर्वस्व समर्पण करने की वह उदात्त भावना और कहाँ पग–पग पर शिक्षकों की पगड़ी उछालने की यह निकृष्ट भावना। जिन युवाओं के आदर्श नकली जीवन जीने वाले अभिनेता एवं अभिनेत्रियाँ हों, जिन्हें अपने महापुरुषों के कार्य तो छोड़ो, नाम तक पता न हों, जिनको स्वेच्छाचार अपनाने के अतिरिक्त और कुछ भी न दीखता हो वे भला देश के बारे में क्या सोचेंगे?

योग्य एवं श्रेष्ठ उपदेशकों का अभावः-

समाज का ऐसा वर्ग हुआ करता था जो कि एक चिकित्सक का कार्य किया करता था। वे बिना किसी पक्षपात के, बिना किसी भेदभाव के, बिना किसी लोभ लालच के, सबके हित को ध्यान में रखकर सत्य एवं हितकारक वचनों द्वारा समाज के रोगों (दुर्गणों, दुर्व्यसनों एवं आसुरी भावों) को दूर करने का कार्य करते थे। शिष्यों एवं अनुयाईयों की संख्या बढ़ाने पर नहीं, अपितु उन्हें आचार व्यवहार वाला बनाने पर वे अधिक बल दिया करते थे। अशुद्ध आचार विचार वाला छली, कपटी एवं दुर्गुणी व्यक्ति भले ही धनी होकर उन्हें दानादि देने वाला क्यों न हो, उसे भी दुत्कार दिया जाता था, फटकार दिया जाता था।

इसके स्थान पर जब उपदेशक लोगों ने सत्य न कहकर चिकनी-चुपड़ी बातों के द्वारा लोगों को बहलाना शुरू कर दिया तो समाज में दोष बढ़े। एक विषैली विचार धारा समाज में फैली कि भाई हम तो किसी की निन्दा, बुराई या खण्डन नहीं करते। हम सभी का मान-सम्मान करते हैं। हम किसी को अपना विरोधी नहीं बनाना चाहते। इसका परिणाम यह हुआ कि दुष्ट लोगों की बन आई। आचरण तो अपना सुधारना नहीं, बस गुरु धारण कर लिया है। हम अमुक के चेले हैं, अमुक से गुरुमन्त्र लिया है। आज टी.वी. पर महात्माओं की बड़ी लम्बी पंक्ति है। उनके चेला-चेली भी लाखों की संख्या में है। धर्म बढ़ रहा दिखता है, परन्तु धार्मिकता कहीं देखने को नहीं मिलती। कैसा अन्धेरा है। स्पष्ट है कि कहीं न कहीं दोष है।

हमें अच्छा व बढ़िया उपदेशक या गुरु कौन लगता है? जो वह बात बोले जो कि हमें पसंद है। अब अपनी कमियाँ कौन सुनना चाहता है? सब यही चाहते हैं कि मीठी-2 लुभावनीं बातें कहने वाले होने चाहिएँ। परिणाम आपके सामने है। समाज में दोषों की, बुराईयों की भरमार हो गई। यह व्यवस्था तो ठीक नहीं है। इससे लोगों का भला होने के स्थान पर उनके धन का हरण, समय का नाश होने के साथ-2 अन्धकार, पाखण्ड़, गुरुडम, शोषण एवं पाप वृत्तियाँ ही बढ़ रही हैं। आज बुराई के विरोध में बोलने वालों को कहा जाता है कि ये तो पाखण्ड करते हैं, लोगों की भावनाओं को ठेस पहुँचा रहे हैं। है ना आश्चर्य! बुरे वे नहीं हैं जो बुरे काम करते है, बुरे वे हैं जो बुरे को बुरा कह रहे हैं। यह भावना कहाँ से उत्पन्न हुई? पेटार्थी लोगों के

स्मरण रखिये कि आपका कोई भी वह कार्य, (चाहे वह कितना ही व्यक्तिगत क्यों न हो) जिसका विपरीत प्रभाव समाज पर पड़ता है, आपके आस पड़ौस पर पड़ता है, वह न तो स्वतंत्रता की परिधि में आता है और न ही व्यक्तिगत हो सकता है।

चिकने-चुपडे प्रचार से। जब उपदेशक लोग ही सत्य का प्रचार नहीं करेंगें तों और कौन करेगा। अमुक गुरु देखो कितना बढ़िया बोलता है, किसी का खण्डन नहीं करता, किसी की बुराई नहीं करता, तो फिर ये लोग क्यों कर रहें हैं? हर व्यक्ति अपनी विचारधारा अपनाने के लिए, अपना जीवन कैसे भी जीने के लिए स्वतंत्र है। इससे किसी को क्या लेना देना? सत्य है भाई! व्यक्ति स्वतंत्र है तो क्या चोर, डाकू, लुटेरे, हत्यारे, बलात्कारी आदि भी स्वतंत्र हैं? उन्हें भी अपना जीवन अपने ढंग से जीने दो। कितना भ्रामक विचार है यह।

स्वतंत्र तो वे हैं, परन्तु स्वतंत्रता की कुछ सीमा है। उसका अनुचित अर्थ मत निकालिये। स्मरण रखिये कि आपका कोई भी वह कार्य, (चाहे वह कितना ही व्यक्तिगत क्यों न हो) जिसका विपरीत प्रभाव समाज पर पड़ता है, आपके आस पड़ौस पर पड़ता है, वह न तो स्वतंत्रता की परिधि में आता है और न ही व्यक्तिगत हो सकता है। जो कोई आपको बुराई के बारे में सचेत करता है, सावधान करता है, छोड़ने के लिए कहता है, उसे अपना परम मित्र जानिये। वही सच्चा गुरु, उपदेशक कहलाने के योग्य है।

हमने बहुत सी सामान्य बातें लिखी हैं जो आज प्रायः घर-2 की कहानी बन चुकी हैं और प्रयास किया है कि बहुत सी बातों को एक बिन्दु के नीचे सम्मिलित कर लिया जाये। इसके अतिरिक्त और भी बहुत सी बातें हैं जो समाज के विघटन का कारण हो सकती हैं।

ये तो रोग हुए। अब इसका उपचार क्या है? अति संक्षेप में इस पर लिखते हैं। माता-पिताओं को पहले स्वयं सावधान रहकर दोषों को दूर करना पड़ेगा। किसी भी विचार को, केवल आखें बंद करके मत अपनाईये। उस पर पूर्ण रूप से ऊहापोह कीजिए। यह मत देखिए कि पड़ौसी तो ऐसे

(शेष पृष्ठ 31 पर)

इतिहास-कथा

वीरवर गोकुल
शौर्य और बलिदान का प्रतीक

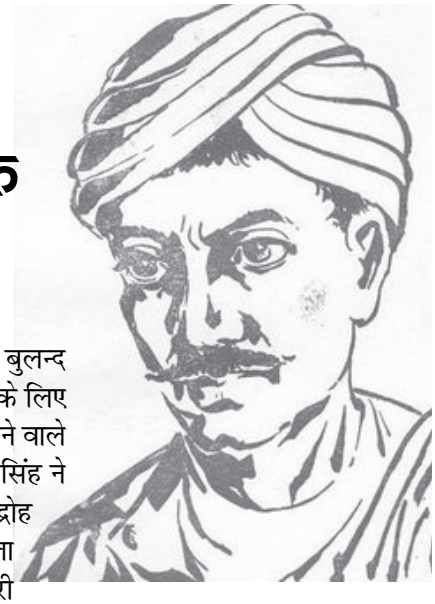

❑**राजेशार्य आट्टा,** 1166, कच्चा किला,
साढौरा, यमुनानगर-१३३२०४

जिस समय दक्षिण में समर्थ गुरु रामदास व माता जीजाबाई औरंगजेब की आंधी से टक्कर लेने वाली सुदृढ़ चट्टान का निर्माण कर रहे थे, उसी समय ब्रज मण्डल में अपने खेत व पशुओं में मस्त रहने वाले अल्हड़ हलधरों ने मजहबी अत्याचार से निजात पाने के लिए अपने परम्परागत शस्त्र संभाले। जब उनकी बहू बेटियों की इज्जत पर हाथ उठने लगा तो हिमगिरि के अन्दर धधकता लावा फूट निकला।

इस क्षेत्र में शान्ति स्थापित करने व किसानों से कर वसूलने के लिए शाहजहाँ ने (१६३६ ई०) मुर्शिद कुली खाँ तुर्कमान को नियुक्त किया तो सैनिक अभियान की आड़ में वह किसानों को खदेड़ कर उनकी स्त्रियों से अपनी वासना शान्त करने लगा। इस पाप का दण्ड देने के लिए किसानों में विद्रोह व द्वेष की भावना भड़क उठी। वे संगठित होकर तुर्कमान की सैनिक टुकड़ियों और चौकियों पर हमला करने लगे। इस विद्रोह का दमन करने के लिए तुर्कमान ने १६३८ ई० में सम्भल के अन्तर्गत जटवाड़ नामक एक सुदृढ़ गढ़ी पर आक्रमण किया, परन्तु मौका पाकर स्वाभिमानी वीरों ने रात्रि के समय मदिरा में चूर तुर्कमान को घेर कर उसका वध कर दिया।

इससे हिण्डौन परगना में बसे जाट, गूजर, मीणा और जादौ राजपूत किसानों में विशेष उत्साह आ गया और उन्होंने विद्रोह का झण्डा बुलन्द कर दिया। जीवन भर इस्लाम के लिए द्रेशद्रोह व जातिद्रोह का भार ढोने वाले गधे के समान मिर्जा राजा जय सिंह ने शाहजहाँ के आदेश पर इस विद्रोह को दबा दिया। क्रान्ति की ज्वाला तो शान्त हो गई, पर चिंगारी अन्दर ही अन्दर जलती रही।

औरंगजेब के अत्याचारों के विरुद्ध लोगों को स्वाधीन, देशभक्त, स्वाभिमानी व हिन्दू जाति का रक्षक बनने का संदेश सुनाने के लिए महाराष्ट्र के क्रान्तिकारी संत समर्थ गुरु रामदास १६६५ ई० में हरियाणा में पहुंचे। इसो पर (मु०नगर) के टीले पर उनका भाषण सुनकर जाट वीर गोकुला ने स्वातन्त्र्य यज्ञ में आहुत होने की प्रतिज्ञा की व गुरु जी का आशीर्वाद लिया। समस्त कृषक वर्ग ने वीर गोकुला को अपना नेता मान लिया।

मई १६६६ में गोकुला ने भगवा रंग का 'शिव हर-हर महादेव' लिखा झण्डा उठाकर अपने पाँच हजार वीर योद्धाओं के साथ मथुरा की ओर प्रस्थान किया। वहाँ जाकर उसने मुख्य मुसलमान हाकिम तथा अन्य कई शाही अधिकारियों को मौत के घाट उतार दिया। फिर वह उन मंदिरों में जा पहुँचा जहाँ गायों को काटा जाता था। वहाँ उसने दो सौ इक्कीस बूचड़ों को तथा दो सौ पचास मांस बेचने वालों को कत्ल कर डाला। गोकुला ने किसानों को शाही कर न देने का आह्वान किया और दिल्ली-आगरा के मध्य क्षेत्रों में छापामार युद्ध जारी रखा।

औरंगजेब ने अब्दुन्नवी खाँ को मथुरा का फौजदार पुनः नियुक्त (सितम्बर १६६८) किया। उसके सैनिक लगान वसूलने लगे, पर किसानों के विरोध के कारण उसे स्वयं मैदान में आना पड़ा। मथुरा परगने के किसानों का नेतृत्व गोकुला ने स्वयं संभाला। अप्रैल १६६९ में फौजदार खान ने आन्दोलनकारियों के प्रमुख गढ़ सुराहा (सहोर) गाँव का घेरा डालकर बर्बाद कर दिया। आक्रमण के समय (१० मई १६६९) गोकुला संगठन के जाट क्रान्तिकारियों ने फौजदार खान को गोली से उड़ा दिया। मुगल सैनिक मैदान छोड़कर भाग निकले और उनकी युद्ध सामग्री जाटों के हाथ लगी। इससे क्रान्तिकारी किसानों के उत्साह में वृद्धि हुई। उन्होंने सादाबाद नगर तथा परगने को लूट लिया। शाही खजाने से उन्हें ८०००० रुपए नकद प्राप्त हुए। अब आगरा, मथुरा, सादाबाद, महावन आदि परगने क्रान्ति के केन्द्र बन गये। हिन्दू

नागरिकों ने गोकुला का खुले दिल से साथ दिया। शीघ्र ही २०००० आत्म बलिदानी वीरों की अवैतनिक सेना तैयार हो गई।

१३ मई १६६९ को औरंगजेब ने आगरा के सीमावर्ती क्रान्तिकारियों को दबाने के लिए सेनापति रादअंदाज को व मथुरा का फौजदार बनाकर सैफ शिकना खाँ को भी भेजा। उनकी सहायता के लिए शिकारी कुत्तों की भूमिका निभाने वाले राजपूत वीरमदेव को भी भेजा। पर ये सब चार महीने तक भी क्रान्ति को दबाने में सफल नहीं रहे। तब फौजदार सैफ शिकन ने गोकुला के पास लूट का समस्त माल वापिस करने तथा भविष्य में लूटमार अथवा अग्निकाण्ड बन्द करने का एक शांति संधि प्रस्ताव भेजा। इसे स्वीकारते ही गोकुला को गत अभियोगों से क्षमादान मिल सकता था, किन्तु उस स्वाभिमानी वीर ने इसे यह कहते हुए ठुकरा दिया–

''मेरा अपराध क्या है जो मैं बादशाह से क्षमा माँगूंगा। तुम्हारे बादशाह को मुझसे क्षमा माँगनी चाहिए, क्योंकि उसने अकारण ही मेरे धर्म का बहुत अपमान किया है, बहुत हानि की है। दूसरे उनके क्षमादान और मित्रता का भरोसा इस संसार में कौन करता है? उसने कुरान को साक्षी बनाकर अपने सगे भाई मुराद से जो वायदे किये थे, उन्हें तुम अच्छी तरह जानते हो। कुरान भी मुराद को कत्ल होने से नहीं बचा सकी। ---क्षमादान अभी तीन वर्ष पहले शिवाजी को भी मिला था न? कुंवर राम सिंह न होते तो अब तक परलोक में बैठे होते।---।''

''तुम चाहते हो कि मैं उस सामान को जो मैंने खुले मैदान में अपने बाजुओं के जोर से पाया है तुम्हारे चालाक बादशाह को लौटा दूँ, जिससे हम फिर पंख कटे कबूतरों की तरह रह जायें।

उनके क्षमादान और मित्रता का भरोसा इस संसार में कौन करता है? उसने कुरान को साक्षी बनाकर अपने सगे भाई मुराद से जो वायदे किये थे, उन्हें तुम अच्छी तरह जानते हो। कुरान भी मुराद को कत्ल होने से नहीं बचा सकी। ---क्षमादान अभी तीन वर्ष पहले शिवाजी को भी मिला था न? कुंवर राम सिंह न होते तो अब तक परलोक में बैठे होते।---।

तुम्हें और तुम्हारे बादशाह को बड़ी मायूसी होगी कि वह सामान मेरे पास नहीं है। मैं रखता भी नहीं, फौरन अपने जाँ निसारों के बीच बांट देता हूँ ताकि वे बाज बन सकें। मैं रहूँ न रहूँ, वह सामान अब मुगलों को नहीं मिलेगा। वह तो तुम्हारी कब्रें तैयार करने में काम आएगा। हाँ, तुम्हारे अन्दाजे बयाँ से जाहिर है कि तुम मुझे लुटेरा साबित करना चाहते हो। तुम्हें मालूम हो, बल्कि तुम्हें मालूम है कि असली लुटेरे तुम्हारे बादशाह और शाहजादे हैं। उनकी तरह हम अपनी प्रजा को नहीं लूटते। --तुम खानदानी लुटेरे हो। बाहर से आकर मालिक बनकर बैठ गए हो।--।'

''भविष्य के लिए मैं मुगलों को क्या वचन दूँ, क्योंकि मेरा कोई भविष्य नहीं है। मैं किसी राज्य या जागीर को बचाने के लिए नहीं लड़ रहा हूँ। मैंने हिन्दुस्तान की मान–मर्यादा की रक्षा के लिए तलवार उठाई है। --इसलिए अब हम दोनों में से एक ही रहना है। या तो बादशाह औरंगजेब रहेगा या यह नाचीज गोकुल।''

इस उत्तर ने संधि की संभावना को एक झटके में ही समाप्त कर दिया। औरंगजेब जो गोकुल को अब तक एक साधारण जमींदार समझ रहा था, अब उसे बराबर का शत्रु मानकर उससे निपटने के लिए तोप और विशाल सेना के साथ दिल्ली से चलकर २८ नवम्बर १६६९ को मथुरा जा पहुँचा। उसने यमुना के किनारे छावनी डाली और वहीं से युद्ध का संचालन करने लगा। मुगल सेना ने जाटों की तीन गढ़ियों रेवाड़ा, चंदरख और सरखरू पर एक साथ अचानक आक्रमण कर दिया। अचानक घेराबंदी होने के कारण क्रान्तिकारी अपने परिवारों को गढ़ियों से बाहर नहीं भेज सके। अतः अनेकों अपने पत्नियों को जौहर की ज्वाला में विदा करके अथवा तलवार के घाट उतारकर भूखे सिंह की भाँति मुगल सेना पर टूट पडे। अनुपम शौर्य के साथ वीरता का परिचय दिया, पर सेनापति हसन खाँ को हराने में सफल नहीं हो सके। लगभग ३०० वीर शहीद हो गये, २५० स्त्री–पुरुष बन्दी बना लिये गये और शेष भागने में सफल हो गये।

भागने वाले अपने घर नहीं गये, अपितु वहाँ से २० मील दूर तिलपत की गढ़ी में जा पहुँचे, जहाँ वीर गोकुला अपनी पूरी तैयारी के साथ विराजमान था और उसके साथ उसका ताऊ उदय सिंह सिंधी भी था। तिलपत से बीस मील दूर भयंकर जंगलों की आड़ लेकर जाट वीरों ने मुगलिया दस्तों पर बड़ी तत्परता और साहस के साथ आक्रमण किया। कई दिन तक मुकाबला होता रहा। आग्नेय अस्त्रों ने जाट वीरों के पैर उखाड़ दिये।

एक रात्रि में उन्होंने अपना घेरा उठा लिया और तिलपत में युद्ध की तैयारियाँ शुरू कर दीं। मुगल सेना ने गाँव को घेर लिया और तोपों से गोलाबारी शुरू कर दी। जाट वीर तीन दिन तब जवाब देते रहे, पर गोलों की मार से सब कुछ तबाह हो गया। तिलपत गाँव

की समस्त विवाहित और अवि- वाहित नारियों ने घरों में आग लगाकर अथवा कुंओं में कूदकर अपने सतीत्व की रक्षा की। इस युद्ध में मुगल सेनानायकों सहित ४००० सिपाही काम आये और कई हजार बुरी तरह जख्मी हुए, जबकि ५००० जाट वीर खेत रहे। वीर गोकुला व उदय सिंह को ७००० किसान सिपाहियों के साथ बंदी बनाकर आगरा भेज दिया।

जनवरी १६७० के प्रथम सप्ताह में जाट सरदार गोकुला और उदय सिंह को औरंगजेब के सामने ले जाया गया। औरंगजेब ने इन्हें इस्लाम स्वीकार करने को कहा तो स्वाभिमानी देशभक्त वीर ने कड़े शब्दों में उत्तर देते हुए कहा-''मैं क्षत्रिय जाट हूँ, मुसलमान कभी नहीं बन सकता और छोड़ देने पर फिर विद्रोह की आग जलाऊँगा।'' औरंगजेब ने दोनों सरदारों को निर्दयतापूर्वक कत्ल करने का आदेश दे दिया। अगले दिन गोकुल सिंह और उदय सिंह को आगरे की कोतवाली पर लाया गया, उसी तरह बंधे हाथ, गले से पैर तक लोहे में जकड़ा शरीर, फिर भी किसी देवता की तरह भव्य और दर्शनीय! जन समूह की सांसें थम गयीं, आंसू उमड़ पड़े। गोकुल सिंह की सुडौल भुजा पर जब जल्लाद का पहला कुल्हाड़ा चला तो हजारों का जनसमूह हाहाकार कर उठा। चौथी कुल्हाड़ी से छिटकी हुई उनकी बांयी भुजा चबूतरे पर गिरकर फड़कने लगी।

परन्तु उस वीर का मुख ही नहीं शरीर भी निष्कम्प था। उसने एक निगाह फव्वारा बन गये कंधे पर डाली और फिर जल्लाद को देखने लगा कि दूसरा वार करे। परन्तु जल्लाद जल्दी में नहीं था, उन्हें ऐसे ही निर्देश थे---दूसरे कुल्हाड़े पर भी हजारों लोग आर्तनाद कर उठे। उनमें हिन्दू और मुसलमान सभी थे---अनेकों ने आँखें बंद कर लीं---अनेक रोते हुए भाग लिये---कोतवाली के चारों ओर मानों प्रलय हो रही थी---एक को दूसरे का होश नहीं था---वातावरण में एक ध्वनि थी---'हे राम! --हे रहीम।'

सिनसिनी गाँव में पैदा हुआ ब्रजमण्डल का यह लाडला वीर राष्ट्र की स्वाधीनता व धर्म हेतु बलिदान देकर अमर हो गया। आज सुरा-सुन्दरी के पीछे अन्धी बनी भारत की जनता क्या अपने पथ-प्रदर्शक से कुछ प्रेरणा लेगी?

कलम, आज उनकी जय बोल।
चढ़ गए जो पुण्य वेदी पर,
लिए बिना गर्दन का मोल।

अन्धा चकाचौंध का मारा,
क्या समझे इतिहास बेचारा।
साक्षी हैं उनकी महिमा के
सूर्य चन्द्र भूगोल खगोल।
कलम, आज उनकी जय बोल।

गीत

क्या हाल हो गया!

❑ **विमलेश बंसल** मो0 8130586002

हे ईश मेरे देश का, क्या हाल हो गया।
माँ भारती का रूप क्यों बदहाल हो गया॥
धानों की फलती बालियाँ, आमों की लदती डालियाँ।
दुग्धों की बहती नालियाँ, माखन की लुटती प्यालियाँ।
ड्रिंकों की अंधी दौड़ में, गोपाल खो गया॥
माँ भारती---
स्वाहा-स्वधा का घोष यहाँ, बजता था रात-दिन।
कान्हा की मीठी तान सुन, होता था मन प्रसन्न।।
धम-धम धमाका धाँय में, स्वर ताल खो गया॥
माँ भारती---
हाथों पर रख कर रोटियाँ, खाते यहाँ के लोग।
खुश होके सबको बाँटते, प्रभु का लगाके भोग।।
मोमोज़, पिज़्ज़ा, बर्गर में, पुआ-माल खो गया॥
माँ भारती---
सुनकर के मीठी बोलियाँ, अतिथि भी रोज़ आते।
दो घूँट पीके जल का भी, आशीष देके जाते।।
डाई व टाई वेष में, वृद्ध बाल खो गया॥
माँ भारती---
करतीं थीं सारे काम, यहाँ खुद बहू बेटियाँ।
भरतीं थीं सबके पेट, पर न भरतीं पेटियाँ।
धोती को जीन्स ले गयी, ससुराल खो गया॥
माँ भारती---
रोके माता एक दिन, मुझसे लिपट गयीं।
हे विमल अब बचा मुझे, मैं पूरी लुट गयी।
कर मुक्त बेड़ी खोल सरसठ साल हो गया॥
माँ भारती---

329 द्वितीय तल, संत नगर, पूर्वी कैलाश, नई दिल्ली-110065

मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम का वास्तविक जीवन चरित्र

कुछ प्रश्न और उनका समाधान

लेखक उत्तर काण्ड प्रक्षिप्त होने के प्रमाण प्रस्तुत कर रहे हैं।

❑**संजय कुमार,** 1904 GF सैक्टर-8 कुरुक्षेत्र-136118

उत्तर काण्ड महर्षि वाल्मीकि जी की रचना नहीं है, इसलिए श्रीराम जी को तपस्वी शम्बूक का हत्यारा नहीं कहा जा सकता। उन्हें गर्भवती स्त्री माता सीता जी के त्याग का अपराधी भी नहीं कहा जा सकता।

श्रीराम जी पर लगाए जाने आरोप कितने सही हैं? क्या श्रीराम जी शूद्र विरोधी थे? क्या उन्होंने शंबूक का वध किया था? क्या उन्होंने गर्भवती सीता को छोड़ दिया था? क्या उनका या उनके भाइयों का लवकुश से युद्ध हुआ था? क्या सीता जी धरती में समा गई थीं? इसके अतिरिक्त अन्य प्रश्न भी हैं, जैसे क्या हनुमान जी बंदर थे? क्या बाली को अन्याय से मारा था? क्या 'ढ़ोल गँवार शूद्र पशु नारी, सकल ताड़ना के अधिकारी' ठीक है? और भी अनेक प्रश्न हैं जो रामायण और श्रीराम जी पर उठाए गए हैं। इस लेखमाला में इन सब प्रश्नों का उत्तर दिया जाएगा।

आजकल 2 पुस्तकें रामायण के नाम से जानी जाती हैं 1- वाल्मीकि रामायण 2-तुलसीदास जी की रामचरित मानस। इसमें से वाल्मीकि रामायण श्रीराम जी के समय में लिखी गई है। आजकल प्राप्त वाल्मीकि रामायण में 7 काण्ड हैं। अंतिम काण्ड उत्तर काण्ड है। तपस्वी शंबूक का वध, लवकुश से युद्ध तथा गर्भवती माता सीता जी का त्याग दोनों इसी काण्ड में आते हैं। परंतु सच्चाई यह है कि महर्षि वाल्मीकि ने जो रामायण लिखी थी उसमें 6 काण्ड ही थे। सातवाँ उत्तर काण्ड बाद मे (17 वीं -18 वीं शताब्दी में) मिलाया गया है। क्योंकि उत्तर काण्ड महर्षि वाल्मीकि जी की रचना नहीं है, इसलिए श्रीराम जी को तपस्वी शम्बूक का हत्यारा नहीं कहा जा सकता। उन्हें गर्भवती स्त्री माता सीता जी के त्याग का अपराधी भी नहीं कहा जा सकता। अत: सनातन धर्म के आदर्श मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम जी को बदनाम करने के लिए किसी दुष्ट ने यह उत्तर काण्ड बाद में मिलाया है। इसके निम्नलिखित प्रमाण हैं।

1. THE ILIAD OF THE EAST 'दी इलियड ऑफ दी ईस्ट' रामायण का इंगलिश में संक्षिप्त अनुवाद है जो FREDERIKA RICHARDSON ने किया था। इसे MACMILLAN AND CO. ने 1870 में प्रकाशित किया था। इसमें केवल पहले 6 काण्डों का ही विवरण है। यदि इस अनुवादक के सामने उत्तरकाण्ड होता तो क्या वह उत्तरकाण्ड का अनुवाद न करता?

2. RALPH T. H. GRIFFITH ने 1874 में रामायण का इंगलिश मे अनुवाद किया है। इसे लंदन मे TRUBNER AND CO. ने तथा भारत में बनारस में Lazarus And Co. ने छापा था। इसमें भी पहले 6 भागों का अनुवाद है। युद्धकाण्ड के अंत में अनुवादक उत्तरकांड के विषय में लिखता है- The Ramayan ends epically complete, with the triumphant return of Rama and his rescued queen to Ayodhya and his consecration and coronation in the capital of his forefathers. Even if the story were not complete, the conclusion of the last canto of the sixth Book evidently the work of a later hand than Valmiki's, which speaks of Rama's glorious and happy reign and promises blessings to those who read and hear the Ramayan, would be sufficient to show that, when these verses were added, the poem was considered to be finished.

अर्थात् एक महाकाव्य के रूप मे रामायण विजयी राम की अपनी रानी को बचाने और अपने पूर्वजों की

राजधानी में राज्याभिषेक के साथ पूरी हो जाती है। छठे अध्याय के अंतिम खंड में वाल्मीकि राम के गौरवशाली और खुशहाल शासन की बात करते हैं और उनके लिए आशीर्वचन कहते हैं, जो रामायण को पढ़ते और सुनते हैं। इससे यह निश्चित हो जाता है कि महाकाव्य यहाँ समाप्त हो जाता है। उत्तरकाण्ड बाद की रचना है जो किसी दूसरे द्वारा लिखी गई है।

3 वाल्मीकि रामायण की संस्कृत में 3 टीका मिलती हैं। उसमें से सबसे मुख्य तथा पुरानी टीका श्री गोविन्दराज जी की है। गोविन्दराज जी ने अपना व अपने गुरु का परिचय बालकाण्ड में रामायण के आरम्भ में तथा युद्ध काण्ड के अंत में दिया है। बीच में कहीं पर ही अपना परिचय नहीं दिया है। यदि गोविन्दराज जी के सामने उत्तर काण्ड होता तो वे अपना परिचय युद्ध काण्ड में न देकर उत्तर काण्ड में देते।

4- सन 1900 के आसपास तक जो भी गोविन्दराज की टीका सहित वाल्मीकि रामायण छपी हैं उनमें उत्तरकाण्ड की टीका नहीं है। परन्तु 1930 के संस्करण में गोविन्दराज की उत्तर काण्ड पर टीका मिलती है, उसके उत्तर काण्ड पर जो टीका दी गई है वह पिछले 6 काण्डों की टीका से बिलकुल अलग है और उत्तर काण्ड को रामायण का हिस्सा दिखाने के लिए बनाई है।

5-भारत में वाल्मीकि रामायण को आधार बना कर कई प्रादेशिक भाषाओं में रामायण लिखी गई हैं- जैसे कम्ब रामायण (तमिल में), रंगनाथ तेलुगु (तेलुगु में), तोरवे रामायण (कन्नड़ में) तथा तुलसीदास जी की रामचरित मानस (अवधी में) अब हम क्रम से इन पर विचार करते हैं-

क- कम्ब रामायण :- इसका रचना काल लगभग बारहवीं शताब्दी है। संस्कृत से भिन्न उपलब्ध भाषाओं में यह सबसे पुरानी रामायण है। इसके लेखक महाकवि कम्बन हैं। इसकी मूल भाषा तमिल है। अब तक इसके हिन्दी में (पहला अनुवाद 1962 में बिहार राजभाषा परिषद्) कई अनुवाद हो चुके हैं। इसमें भी बालकाण्ड से लेकर युद्धकाण्ड तक 6 ही काण्ड हैं। यह भी भगवान् श्रीराम जी के राज्य अभिषेक व श्रीराम जी द्वारा दरबार में सभी के लिए प्रशंसा वचन के साथ पूरी होती है। यह बहुत अधिक वाल्मीकि रामायण से मिलती है। यदि महाकवि कम्बन जी के सामने वाल्मीकि रामायण में उत्तर-काण्ड होता तो वह इसका वर्णन जरुर करते। परन्तु उनके सामने जो वाल्मीकि रामायण उपलब्ध थी, उसमें 6 काण्ड ही थे।

ख. रंगनाथ रामायण :- इसका रचना काल लगभग 1380 ईस्वी है। इसकी भाषा तेलुगु है, परन्तु अब इसका हिंदी में अनुवाद (1961 में बिहार राजभाषा परिषद द्वारा) हो चुका है। यह रामायण श्रीरामजी के राज्य अभिषेक व दरबार के दृश्य के साथ पूरी हो जाती है। इसमें बालकाण्ड से लेकर युद्ध काण्ड तक 6 काण्ड हैं। यदि इसके रचयिता के सामने उपलब्ध वाल्मीकि रामायण में उत्तरकाण्ड होता तो वह अवश्य ही उसका उल्लेख करते, परन्तु उनके सामने जो वाल्मीकि रामायण उपलब्ध थी, उसमें 6 काण्ड ही थे।

3. तोरवे रामायण- इसका रचना काल लगभग 1500 ईस्वी है। इसकी मूल भाषा कन्नड़ है, परन्तु अब इसका हिंदी में अनुवाद चुका है। इसके लेखक तोरवे नरहरी जी हैं। यह रामायण श्रीरामजी के राज्य अभिषेक, सुग्रीव आदि को विदा करना, रामराज्य में सुख शान्ति, दरबार के दृश्य तथा रामायण पढ़ने के लाभ के वर्णन के साथ पूरी हो जाती है। इसमें बालकाण्ड से लेकर युद्ध काण्ड तक 6 काण्ड हैं। यदि इसके रचयिता के सामने उपलब्ध वाल्मीकि रामायण में उत्तर काण्ड होता तो वह अवश्य ही उसका उल्लेख करते परन्तु उनके सामने जो वाल्मीकि रामायण उपलब्ध थी उसमें 6 काण्ड ही थे।

(आगामी अंकों में जारी)

चुनाव सम्पन्न

आर्य उपप्रतिनिधि सभा जनपद गाजियाबाद का वार्षिक निर्वाचन महर्षि दयानन्द संस्कृत गुरुकुल महाविद्यालय पटेल मार्ग में सम्पन्न हुआ जिसमें ये पदाधिकारी चुने गए-

प्रधान : श्री श्रद्धानन्द शर्मा गाजियाबाद, **मंत्री** : श्री ज्ञानेन्द्र सिंह आर्य, **कोषाध्यक्ष** : श्री सुरेन्द्रपाल सिंह आर्य, मुरादनगर। शेष कार्यकारिणी के गठन का अधिकार भी इन्हीं तीनों अधिकारियों को दिया गया। (सत्यवीर चौधरी)

अंधेरी (मुम्बई) में गायत्री महायज्ञ

आर्यसमाज अंधेरी (प०) मुम्बई में १४ से १७ अगस्त तक गायत्री महायज्ञ तथा वेद प्रवचन का आयोजन किया गया। यज्ञ के ब्रह्मा के रूप में आचार्य विनय विद्यालंकार जी उत्तराखंड से पधारे। इनके साथ सुप्रसिद्ध भजन गायक श्री प्रभाकर शर्मा जी के भजनों का कार्यक्रम भी हुआ। श्रद्धालुओं ने यजमान के रूप में यज्ञ में भागीदारी की औश्र वेदप्रवचनों का लाभ उठाया। (हरीश आर्य, प्रधान)

दर्शन शास्त्र और गीता वेद के बारे में क्या कहते हैं

❑श्री धर्मदेव विद्यामार्तण्ड

न्याय, वैशेषिक, सांख्य, योग, वेदान्त और मीमांसा ये छः दर्शन शास्त्र हैं, जिन्हें गौतम, कणाद, कपिल, पतंजलि, वेदव्यास और जैमिनी नामक ऋषियों ने बनाया। इन सब दर्शनों में वेदों के महत्त्व को स्पष्टतया स्वीकार किया गया है। उदाहरणार्थ **न्याय** दर्शन के 2.1.67 'मन्त्रायुर्वेद प्रामाण्यवच्च तत्प्रामाण्यमाप्तप्रामाण्यात्' इत्यादि सूत्रों में परम आप्त परमेश्वर का वचन होने और असत्य, परस्पर विरोध और पुनरुक्ति आदि दोष रहित होने से वेद को परम प्रमाण सिद्ध किया गया है।

वैशेषिक शास्त्रकार कणाद मुनि ने 'तद्वचना-दाम्नायस्य प्रामाण्यम्' 1.1.3 इस सूत्र द्वारा परमेश्वर का वचन होने से आम्नाय अर्थात् वेद की प्रामाणिकता का प्रतिपादन किया है।

सांख्यकार कपिल मुनि को भूल से कई विचारक नास्तिक समझते हैं किन्तु उन्होंने भी 'निजशक्त्यभिव्यक्तेः स्वतः प्रामाण्यम्' इत्यादि सूत्रों द्वारा वेदों को ईश्वरीय शक्ति से अभिव्यक्त (प्रकट) होने के कारण स्वतः प्रमाण माना है। सांख्य सूत्रों में जगत्कर्त्ता ईश्वर का 'स हि सर्ववित्, सर्वकर्त्ता' इत्यादि सूत्रों द्वारा स्पष्ट प्रतिपादन है, अतः कपिल मुनि को नास्तिक समझना बड़ी भूल है।

इस प्रसंग में एक और बात का उल्लेख करना आवश्यक है। वह यह कि कुछ लोग सांख्य दर्शन के 'ईश्वरासिद्धेः।' 1.92 इस सूत्र के आधार पर यह समझते हैं कि सांख्यकार कपिल मुनि ईश्वर के अस्तित्त्व को स्वीकार नहीं करते थे। ऐसी अवस्था में 'निजशक्त्यभिव्यक्तेः स्वतः प्रामाण्यम्' इसका ईश्वरीय शक्ति से वेदों की अभिव्यक्ति और स्वतः प्रमाणता परक अर्थ कैसे ठीक हो सकता है। इस विषय में हमने अपनी 'बौद्ध मत और वैदिक धर्म' नामक पुस्तक में पर्याप्त प्रकाश डाला है। यहाँ इतना ही लिखना पर्याप्त है कि 'ईश्वरासिद्धेः' यह सूत्र प्रत्यक्ष के प्रकरण में आया है, जिसका लक्षण कपिल मुनि ने 'यत सम्बन्ध सत् तदाकारोल्लेखि विज्ञान तत् प्रत्यक्षम्।' 1.89 इस रूप में किया है। अतः 'ईश्वरासिद्धेः' का इतना ही अभिप्राय है कि प्रत्यक्ष प्रमाण द्वारा ईश्वर की सिद्धि नहीं हो सकती क्योंकि वह सर्वव्यापक निराकार होने से प्रत्यक्ष का विषय नहीं। साथ ही ईश्वर की उपादान कारणता का (तद्योगेऽपि न नित्यमुक्तः। प्रधानशक्तियोगाच्चेत् सङ्गापत्तिः। सत्तामात्राच्चेत् सर्वैश्वर्यम्। प्रमाणाभावान्न तत्सिद्धिः। संबन्धाभावान्नानुमानम्। श्रुतिरपि प्रधान कार्यत्वस्य।।) पंचम अध्याय के इन सूत्रों में निषेध किया गया है जिनका तात्पर्य यह है कि ईश्वर को इस सृष्टि का उपादान कारण माना जाएगा तो ईश्वर नित्यमुक्त नहीं रहेगा, क्योंकि उपादान कारण मानने से उसमें रागादि की प्रवृत्ति माननी पड़ेगी जो नित्यमुक्त में नहीं हो सकती। यदि ईश्वर को जगत् का उपादान कारण माना जाए तो ईश्वर में सर्वज्ञतादि जो गुण हैं वे इस जगत् में भी होने चाहिए, क्योंकि उपादान कारण के गुण कार्य में होते है, किन्तु ऐसा देखने में नहीं आता अतः वह जगत् का उपादान कारण नहीं। प्रत्यक्ष प्रमाण के न होने से भी ईश्वर को जगत् का उपादान कारण नहीं सिद्ध किया जा सकता और न अनुमान प्रमाण द्वारा यह सिद्ध किया जा सकता है कि ईश्वर जगत् का उपादान कारण है। श्रुति भी प्रधान अथवा प्रकृति को ही जगत् का उपादान कारण मानती है।

कहीं इन सूत्रों से यह भ्रम न हो जाए कि सांख्यकार ईश्वर की जगत के निमित्त कारण के रूप में सत्ता का भी निषेध करते हैं। उनके निम्न सूत्र उल्लेखनीय हैं-

स हि सर्ववित् सर्वकर्त्ता।। सांख्य 3.56। अर्थात् ईश्वर सर्वज्ञ और निमित्त कारण रूप से जगत का कर्त्ता है।

ईदृशेश्वरसिद्धिः सिद्धा।। 3.57 ऐसे जगत् के निमित्त कारण रूप सर्वज्ञ ईश्वर की सिद्धि सिद्ध है।

व्यावृत्तोभयरूपः।। 1.16 वह ईश्वर प्रकृति और पुरुष (आत्मा) दोनों से भिन्न स्वरूप वाला है। इत्यादि।

सांख्य शास्त्र निरीश्वरवाद का प्रतिपादक नहीं किंतु इसमें नित्य ब्रह्म की सत्ता का प्रतिपादन है। इस बात का महाभारत शान्ति पर्व मोक्षधर्म पर्व अ. 301 में भी स्पष्ट प्रतिपादन है। यथा-

अत्र ते संशयो माभूत्, ज्ञानं सांख्य परं मतम्।
अक्षरं ध्रुवमेवोक्तं, पूर्णं ब्रह्म सनातनम्।।
अनादिमध्यनिधनं, निर्द्वन्द्वं कर्तृशाश्वतम्।
कूटस्थं चैव नित्यं च, यद्वदन्ति मनीषिण:।।

महाभारत शान्ति पर्व (मोक्षधर्म पर्व) अ. 27 में कपिल के वचन भी द्रष्टव्य हैं, जिन से उनकी वेद और ब्रह्म दोनों पर पूर्ण निष्ठा स्पष्टतया ज्ञात होती है।

वेदा: प्रमाणं लोकानां, न वेदा: पृष्ठत: कृता:।
द्वे ब्रह्मणी वेदितव्ये शब्दब्रह्म परं च यत्।।1
शब्दब्रह्मणि निष्णात: परं ब्रह्माधिगच्छति।।2

अर्थात् वेद समस्त लोगों के लिए प्रमाण हैं। उन्हें पीछे से नहीं बनाया गया। ब्रह्मपदवाच्य दो का ज्ञान आवश्यक है। एक तो वेद और दूसरा परब्रह्म-परमेश्वर। जो शब्दब्रह्म अर्थात् वेद में निपुण है वह परब्रह्म को प्राप्त कर सकता है। इस प्रकार कपिल की नास्तिकता का पूर्ण निराकरण होता है।

योगदर्शनकार पतंजलि मुनि ने 'स एष पूर्वेषामपि गुरु: कालेनानवच्छेदात्।। समाधिपाद सू. 26 इत्यादि में परमेश्वर को नित्य वेद ज्ञान देने के कारण सब पूर्वजों का भी आदि गुरु माना है।

वेदान्त शास्त्र के कर्त्ता वेदव्यास जी ने 'शास्त्र योनित्वात्' 1.1.3 तथा 'अतएव च नित्यत्वम्' 1. 3.29 इत्यादि सूत्रों द्वारा परमेश्वर को ऋग्वेदादि रूप सर्वज्ञानभण्डार शास्त्र का कर्त्ता मानते हुए वेद की नित्यता का प्रतिपादन किया है। 'शास्त्रयोनित्वात्।' इस सूत्र के भाष्य में श्री शंकराचार्य जी ने जो लिखा है वह भी इस प्रसंग में महत्त्वपूर्ण होने के कारण उल्लेखनीय है। वे लिखते हैं-

ऋग्वेदादे: शास्त्रस्यानेकविद्यास्थानोपबृंहि तस्य प्रदीपवत् सर्वार्थावद्योतिन: सर्वज्ञकल्पस्य योनि: कारणं ब्रह्म। नहीदृशस्यग्वेदादिलक्षणस्य सर्वज्ञगुणान्वितस्य सर्वज्ञादन्यत सम्भवाऽस्ति।।

अर्थात् ऋग्वेदादि जो चार वेद हैं वे अनेक विद्याओं से युक्त हैं, सूर्य के समान सब सत्य अर्थों के प्रकाश करने वाले हैं, उनका बनाने वाला सर्वज्ञत्वादि गुणों से युक्त परब्रह्म है, क्योंकि सर्वज्ञ ब्रह्म से भिन्न कोई जीव, सर्वज्ञगुणयुक्त इन वेदों को बना सके ऐसा संभव नहीं इत्यादि।

मीमांसा शास्त्र के कर्त्ता जैमिनी मुनि तो धर्म का लक्षण ही यही करते हैं कि- चोदनालक्षणोऽर्थो धर्म:।। अर्थात् जिस के लिए वेद की आज्ञा हो वह धर्म और जो वेद विरुद्ध हो वह अधर्म कहलाता है।

इस प्रकार समस्त शास्त्र एक स्वर से वेदों की नित्यता और स्वत: प्रमाणता का प्रतिपादन करते हैं।

गीता के कुछ वचन

भगवद्गीता एक जगद्विख्यात महत्त्वपूर्ण ग्रंथ है। यद्यपि वह महाभारतान्तर्गत है और महाभारत के वेदों के महत्तव विषयक कुछ श्लोकों को हम उद्धृत कर चुके हैं। तथापि गीता के सुप्रसिद्ध ग्रंथ होने के कारण उसके वेद विषयक कुछ श्लोकों का उल्लेख करना इस प्रकरण में हमें उचित प्रतीत होता है। गीता के तृतीय अध्याय में श्रीकृष्ण महाराज ने यज्ञ के विषय का निरूपण करते हुए कहा है-

अन्नाद् भवन्ति भूतानि, पर्जन्यादन्नसम्भव:।
यज्ञाद् भवति पर्जन्य:, यज्ञ: कर्मसमुद्भव:।।
कर्म ब्रह्मोद्भवं विद्धि ब्रह्माक्षरसमुद्भवम्।
तस्मात्सर्वगतं ब्रह्म, नित्यं यज्ञे प्रतिष्ठितम।। 3- 14,15

अर्थात् प्राणियों का जीवन अन्न पर निर्भर है। मेघों से अन्न की उत्पत्ति होती है। मेघ यज्ञ से बनते हैं। यज्ञ कर्म से सम्पन्न होता है। धर्म-कर्म की उन्नति व ज्ञान ब्रह्म अर्थात् वेद के द्वारा होता है। वह ब्रह्म अर्थात वेद अक्षर वा अविनाशी परमेश्वर से आविर्भूत होता है, इसलिए सर्वव्याप्क परमेश्वर को सदा यज्ञ में प्रतिष्ठित जानो। इस श्लोक में वेदों की उत्पति अविनाशी परमेश्वर से स्पष्टतया बताई गई है।

इस श्लोक के भाष्य में श्री शंकराचार्य जी ने लिखा है-

कर्म (ब्रह्मोद्भवम्) ब्रह्मवेद: ----------
----------यज्ञविधिप्रधानत्वाद् यज्ञे प्रतिष्ठितम्।।
भगवद्गीता शंकर भाष्ये अ. 3-15

(श्रीमद्भगवद्गीता शांकर भाष्यादिसप्तटीकोपेता गुजराती मुद्रणालय, मुम्बई पृ. 181

तात्पर्य यही है कि कर्म की उत्पत्ति वेद से और वेद की अविनाशी परमात्मा से है। वेद साक्षात् परमात्मा से पुरुष श्वास की तरह निकला है। अत: सब विषयों का प्रकाशक होने के कारण उसे ही सर्वगत कहा है। वह सर्वगत ब्रह्म (वेद) यज्ञ विधि प्रधान होने से यज्ञ में प्रतिष्ठित है।

(शेष पृष्ठ ३२ पर)

मैं कैसा मरण चाहता हूँ

❑अभिमन्यु कुमार खुल्लर
वरिष्ठ लेखाधिकारी केन्द्र शासन (से०नि०)
२२, नगरनिगम क्वार्टर्स, जीवाजीगंज,
लश्कर, ग्वालियर-४७४००१

जिस व्यक्ति ने जीवन में उन्नति करने में दूसरों का अहित नहीं किया। भयंकर विपरीत परिस्थितियों में भी धैर्य को छोड़कर कोई कुटिल मार्ग नहीं अपनाया। यदि जीवन में उसकी सफलता चमत्कारिक नहीं रही फिर भी वह पूर्णतया संतुष्ट होकर जीवन यापन करता रहा, निष्ठावान रहा। आत्मिक सुख और शांति उसकी जीवन संगिनी बनी रही। ऐसा ही व्यक्ति सार्थक जीवन जीता और 'जीवेम शरदः शतम्' की प्रार्थना करने का हक रखता है और उसे ही प्रभु शांतिपूर्वक मृत्यु की महानिद्रा को सौंप देता है।

लोग कहते हैं कि मरना कोई नहीं चाहता। हाथ-पैरों से लाचार अंगविहीन, अंधत्व का जन्म से शिकार, भीषण रोगों से ग्रस्त किसी भी मनुष्य से पूछिए कि क्या वह मरना चाहता है? उत्तर 'न' में ही मिलेगा। उसे भी मालूम है कि एक न एक दिन मरना पड़ेगा। फिर भी वह अतीव पीड़ा-कष्ट भोग कर भी क्यों जीना चाहता है, यह अद्‌भुत पहेली है। और मैं, जिसके सब अंग प्रत्यंग ७६ वर्ष की आयु में शिथिल हो गये हैं, पर सुचारू रूप से कार्यरत हैं, अपनी मृत्यु की प्लानिंग करना चाहता हूँ। शायद अब बहुत देर हो गई है।

तुलसीदास जी कह गये हैं- हानि-लाभ, जीवन-मरण, यश-अपयश विधि-हाथ। अगर ईश्वर-जीवन मरण अपने पास नहीं रखता तो कोई उसे मानता ही नहीं। जीव कर्म करने में स्वतंत्र अनादि आत्मा तो है, पर शरीर तो परमात्मा द्वारा निर्मित है। जिसने दिया है उसे लेने का भी पूरा-पूरा अधिकार है, यह मानना होगा। उसके द्वारा जीवन देने ओर लेने की प्रक्रिया एक बड़ी विचित्र कठिन और आंशिक रूप से सुलझी हुई पहेली है। वेदवेत्ता इस प्रक्रिया को कर्मफल संज्ञा देते हैं। यह अत्यन्त पेचीदा प्रश्न है, इसलिए फिलहाल यहीं छोड़ता हूँ। मुझे तो मरण 'मृत्यु' के विचार ने जकड़ रखा है।

१ जनवरी से २० जनवरी २०१४ तक देश की राजधानी दिल्ली में चालीस मनुष्य, सड़कों पर ठण्ड में सिकुड़कर मर गये। यह संख्या एक दिन में टी० वी० चैनलों द्वारा प्रसारित की गई संख्या है। संपूर्ण दिल्ली में ही पूर्ण शीत ऋतु में कितनी मृत्यु-- भूख-प्यास, रहने का अभाव से हुई, ज्ञात नहीं है। सम्पूर्ण उत्तर भारत की बात तो छोड़िए। इसका प्रसारण २५ जनवरी २०१४ की शाम को हुआ। गणतंत्र दिवस की पूर्व संध्या पर। इसी समय राष्ट्रपति महोदय देश की गौरव गाथा गा रहे थे। सोचिए, जिस देश को स्वतंत्र हुए ६६ वर्ष व्यतीत हो गए हों, उसके नागरिक इस तरह बेमौत मर जावें! कुत्ते की मौत को सबसे बुरी मौत माना जाता है। इन मौतों को किस श्रेणी में डालोगे? ऐसी मौत की भयावहता मेरी कल्पना से भी बाहर है।

जून २०१३ में अलकनन्दा द्वारा केदारनाथ मंदिर व उसके चारों और एक बड़े भू-भाग में भयंकर बाढ़ व भूस्खलन ने हजारों भक्तों-अभक्तों को लील लिया। वे बह गये या मिट्टी में दब गये।

मंदिर के गर्भगृह में जहाँ देवता विराजमान थे, लाशों व मलबे का अम्बार लग गया। मैं hope against hope- आशा के विपरीत आशा रख रहा था कि अब तो मूर्तिपूजक हिन्दुओं को संदेह से परे, विश्वास हो गया होगा कि जो जाग्रत देवता स्वयं अपने को नहीं बचा सका वह उनका कल्याण, उनकी मनोकामनाओं की पूर्ति, उनके पापों से मुक्ति व जन्म मरण से मुक्ति कैसे दिला पावेगा?

केदारनाथ ही नहीं, समीपस्थ ग्रामवासियों को, होटल मालिकों, दुकानदारों को यही चिन्ता थी कि केदारनाथ मंदिर का यथाशीघ्र पुनरुद्धार हो जावे तो सब कार्य पूर्ववत् चालू हो जावेंगे। मंदिर के ट्रस्टियों को भी चिन्ता थी कि जिस

देवता की बदौलत एक लाख रुपया प्रतिदिन चढ़ावा मिलता है, उसका शुद्धिकरण यथाशीघ्र होना चाहिए। शुभ-मुहूर्त में पूजा-अर्चना प्रारंभ हुई और उसी दिन शाम को मलबे से निकाली गई २६३ लाशों के शवदाह (कैसे?) का भी समाचार आ गया। जिन्दगी और मौत साथ-साथ चलती है।

नहीं, मैं नहीं चाहूँगा कि केदारनाथ के गर्भगृह में, देवता के समक्ष मिट्टी में दबा पड़ा मिलूँ। मुझे केदारनाथ के दर्शन का पुण्य नहीं चाहिए।

समझदार लोग केदारनाथ ही नहीं, सोमनाथ, मथुरा और काशी-विश्वनाथ आदि के मंदिरों के विध्वंस और पुनर्निर्माण की कथा अच्छी तरह जानते हैं। ये सब पूजा स्थल निरीह, गरीब, अशिक्षित धर्मभीरु हिन्दुओं के ही नहीं; पूर्ण सम्पन्न, अति-सम्पन्न, बौद्धिक रूप से अत्यन्त प्रबुद्ध हिन्दू भक्तों के आस्था-स्थल पूर्णतया व्यापारिक-केन्द्र हैं। यह ऐसा व्यापार है जिसमें बिना विशेष इनवेस्टमेण्ट (पूँजी लगाए) लाभ ही लाभ है; हानि की तो मीलों तक कोई संभावना ही नहीं।

२५ दिसम्बर १३ से १ जनवरी १४ तक नासिक (महाराष्ट्र) के समीप स्थित शिरडी साई बाबा के मंदिर में १७ करोड़ का चढ़ावा आया। प्रत्येक वर्ष गणेश चतुर्थी के पर्व पर मुम्बई के लालबाग के राजा व सिद्धिविनायक मंदिर में करोड़ों का चढ़ावा आता है। वैष्णों देवी, तिरुपति के बालाजी आदि की बात नहीं कर रहा हूँ। पुट्टपार्थी के सत्य साईं बाबा के आकस्मिक निधन (स्वघोषित मृत्यु तिथि से पूर्व) के पश्चात् उनके व्यक्तिगत कमरे से करोड़ों का कैश, स्वर्ण आदि मिला था। मैं समझना चाहता हूँ कि क्या केदारनाथ मंदिर का शिव (ईश्वर) इन सब मंदिरों/ईश्वरों से कम शक्तिशाली, कम प्रभावकारी था? प्राकृतिक तबाही में जब वह स्वयं न बच सका और न ही अपने हजारों भक्तों को बचा सका तो क्या गारण्टी है कि ऐसी ही किसी भीषण त्रासदी में इन मंदिरों के भगवान अपने-अपने भक्तों को बचा पाएंगे? नहीं, नहीं मैं इनकी शरण में जाने पर, ऐसी ही किसी भीषण दुर्घटना में मरना नहीं चाहूँगा।

मेरी जानकारी के अनुसार सबसे पीड़ादायक मृत्यु कैन्सर रोगी की होती है। व्यक्तिगत अनुभव तो मुझे है नहीं पर एक व्यक्ति को यह दारुण कष्ट भुगतते देखा है। चिकित्सकों को बहुत अच्छी तरह पता है कि इस बीमारी का कारण ज्ञात नहीं है। प्रत्येक केस में शल्य-क्रिया और कैमोथैरेपी द्वारा शत-प्रतिशत रोगमुक्त होने की संभावना नहीं है। कैंसर ग्रस्त रोगी की मृत्यु होगी और अत्यन्त पीड़ादायक मृत्यु! टर्मिनल स्टेज में मरीज को 'अफीम' (पैथेडिन) की बड़ी बड़ी खुराकें दी जाती हैं जिससे नींद/बेहोशी में वह पीड़ा का अनुभव नहीं कर सके। नहीं, मैं ऐसी मौत नहीं चाहता।

एक अत्यन्त आत्मीय परिचित हैं। वर्षों से उन्हें जानता हूँ। कार्यालय में मुझसे वरिष्ठ थे। घर-परिवार में मेरा व मेरे परिवार का बहुत आना जाना रहा है। लगभग ८५ वर्ष की आयु है। सदाबहार पत्नी पिछले दस वर्षों से बिस्तर पर पड़ी है। आंशिक रूप से मानसिक संतुलन खो चुकी है। दस वर्ष से पत्नी का मलमूत्र साफ करके, भीषण मानसिक त्रासदी झेलते हुए अब उनका मानसिक संतुलन बिगड़ रहा है। जब भी मिलते हैं, यही कहते हें कि खुल्लर! यह सब क्या है? किन कर्मों की सजा ये पा रही है और किन कर्मों की मैं? पिछले ४५ वर्ष की दीर्घ अवधि में उनके या उनके परिवार के किसी भी सदस्य के किसी दोष या बुराई की बात कभी नहीं सुनी। ईश्वर न जाने किस दारुण मृत्यु की ओर इन दोनों प्राणियों को तिल-तिल घसीट रहा है। मैं ऐसी मृत्यु भी कभी नहीं चाहूँगा।

मुझे दुर्घटना में अकस्मात् हुई मौत भी नहीं चाहिये। आजकल सम्पन्न वृद्धों को भी अकेले ही बुढ़ापा झेलना पड़ता है। ये ही आजकल लोभी, लुटेरों के आसान टारगेट बने हुए हैं। बड़ी बेरहमी से इनकी हत्या की जाती है, लूट-पाट की जाती है। हमारी भी यही स्थिति है। रात को बाथरूम जाते हुए अनेक बार ख्याल हो आता है कि क्या हम भी इसी निर्मम पीड़ादायक मृत्यु के शिकार तो नहीं होंगे!

प्रश्न यह उठता है कि क्या मैं या अन्य कोई व्यक्ति मौत का चुनाव कर सकते हैं? शत-प्रतिशत सही उत्तर जीवात्मा के पास नहीं, परमात्मा के पास मिलना चाहिये, क्योंकि जीवन-मरण उसके हाथ में हैं। ऋषि मुनियों ने वर्षों कड़ी तपस्या की, साधना की और परमात्मा से पूछा-

ऐसे व्यक्ति का निर्माण किया जाता है, अपने आप नहीं बनता। उसे बचपन से ही नहीं, वरन् गर्भाधान से ही संस्कारवान् बनाया जाता है। उसे सत्-पथ पर चलने की प्रेरणा, योग्यता और सामर्थ्य प्रदान किया जाता है। सौ वर्ष के लम्बे जीवनकाल में अथवा जितने वर्षों का उसको जीवन मिला हो, समस्त झंझावातों को झेलकर जब वह जीवन के अवसान की ओर बढ़ता है, तब उसे पूर्णता का सुख मिलता है और शांति की मृत्यु मिलती है।

(शेष पृष्ठ ३४ पर)

घर पर बनाएँ और खाएँ : सौंठ पाक

प्रस्तुति : संजय कुमार

(यह प्रयोग आयुर्वेद के प्रतिष्ठित ग्रंथ गदनिग्रह के आधार पर प्रस्तुत किया जा रहा है।)

आवश्यक सामग्री

सोंठ -320 ग्राम

देशी घी- 800 ग्राम (यदि गाय का घी मिले तो बहुत अच्छा)

दूध- 5 लीटर (यदि गाय का हो तो अधिक अच्छा)

चीनी- 2 किलो (यदि चीनी के स्थान पर मिश्री लें तो अधिक गुणकारी होगा)

त्रिकटु चूर्ण (सोंठ-काली मिर्च-पीपल)- 40ग्राम (त्रिकटु चूर्ण दिव्य फार्मेसी का मिलता है)

त्रिजात चूर्ण-(दालचीनी-छोटी इलायची-तेजपत्ता) 40 ग्राम

त्रिकटु चूर्ण-त्रिजात चूर्ण के स्थान पर दिव्य फार्मेसी का सितोपलादि चूर्ण मिलाएँ तो अधिक गुणकारी होगा।

इस सामग्री से कुल तैयार मिश्रण लगभग 4 किलोग्राम बनता है। दिए गए तौल के अनुपात में कम या अधिक बना सकते हैं। जैसे 1 किलो के लिए 80 ग्राम सोंठ व इसी प्रकार अन्य सामग्री।

सोंठ पीसी हुई लें या खुद पीसें परंतु उसमे घुन न लगा हो। बहुत दिनों की पीसी हुई न लें। यदि साबुत सोंठ को खुद पीसें तो अधिक गुणकारी होगा।

विधि:-

1- सोंठ व दूध को मिलाकर पकाएँ।

2-पकाते समय चलाते रहें ताकि दूध उफन कर बाहर न निकले।

3-इस तरह सोंठ और दूध के मिश्रण का खोया (मावा) बना लें। 4- फिर उसमें घी मिलाएँ।

5-घी मिलाकर खोये को इतना भुनें कि लगभग सूख जाए। 6-उसके बाद आग पर से हटा कर पीसी हुई चीनी या मिश्री मिलाकर दूसरी दवाएँ भी मिला दें। ध्यान रहे- खोये में पानी कम रहे, नहीं तो सड़ जाएगा।

सेवन:-

बड़े- लगभग- 50 ग्राम, सुबह या शाम को दूध के साथ। बच्चे- 10 से 20 ग्राम।

गुण-

1-सर्दी में बार-बार होने वाले खांसी जुकाम से बचाएगा।

2-डिप्रेशन में अत्यंत लाभकारी है।

3-चलते फिरते समय चक्कर आने में लाभकारी है ।

4-आमवात अर्थात् घुटनों के दर्द में फायदा करता है।

5-बालों को समय से पहले सफेद होने से रोकता है।

6-पुरुषों के रोगों में भी लाभ करता है।

खुजली की परेशानी से राहत पाएँ

खुजली एक त्वचा रोग है, जिससे व्यक्ति काफी परेशान और निराश हो जाता है। खुजली के लिए सबसे कारगर उपाय है तेल की मालिश जिससे रूखी और बेजान त्वचा को नमी मिलती है।

●खुजली होने पर प्राथमिक सावधानी के तौर पर सफाई का पूरा ध्यान रखिए।

●साबुन का प्रयोग जितना भी हो सकता है, कम कर दें और सिर्फ मृदु साबुन का ही प्रयोग करें।

●शुष्क त्वचा के कारण होने वाली खुजली को दूध की क्रीम लगाने से कम किया जा सकता है।

●अगर आपको कब्ज है तो उसका भी इलाज करवाएँ।

●हफ्ते में दो बार मुल्तानी मिट्टी और नीम की पत्ती का लेप लगाएं, उसके बाद साफ पानी से शरीर को धो लें।

●थोड़ा सा कपूर लेकर उसमें दो बड़े चम्मच नारियल का तेल मिलाकर खुजली वाले स्थान पर नियमित लगाने से खुजली मिट जाती है। हां, तेल को हल्का सा गरम करके ही कपूर में मिलाएँ।

●नारियल तेल का दो चम्मच लेकर उसमें एक चम्मच

टमाटर का रस मिलाइए। फिर खुजली वाले स्थान पर भली प्रकार से मालिश करिए। उसके कुछ समय बाद गर्म पानी से स्नान कर लें। एक सप्ताह ऐसा लगातार करने से खुजली मिट जाएगी।

●यदि गेहूं के आटे को पानी में घोल कर उसका लेप लगाया जाए, तो विविध चर्म रोग, खुजली, टीस, फोडे-फुंसी व आग से जले हुए घाव में भी राहत मिलती है।

●सवेरे खाली पेट 30-35 ग्राम नीम का रस पीने से चर्म रोगों में लाभ होता है, क्योंकि नीम का रस रक्त को साफ करता है।

●खुजली से परेशान लोगों को चीनी और मिठाई नहीं खानी चाहिए। परवल का साग, टमाटर, नींबू का रस आदि का सेवन लाभप्रद है।

●खुजली वाली त्वचा पर नारियल तेल अथवा अरंडी का तेल लगाने से बहुत फायदा मिलता है।

●नींबू का रस बराबर मात्रा में अलसी के तेल के साथ मिलाकर खुजली वाली जगह पर मलने से हर तरह की खुजली से छुटकारा मिलता है।

●अगर खुजली पूरे शरीर में फैल रही है तो 3 या 4 दिनों तक पीसी हुई अरहर की दाल दही में मिश्रित करके पूरे शरीर पर लगायें। इससे खुजली फैलने से रुक जायेगी और जल्द ही गायब भी हो जायेगी।

हे साथी

❑**डॉ० सुरेश प्रकाश शुक्ल** (वरिष्ठ साहित्यकार)

हे साथी घर छोड़ के तेरा, अपने घर को जाना।
दौड़ के आ जाऊँगा मिलने, आये याद बुलाना।।

इस दर के, हर एक छोर के, भाव भरे हैं मन में।
जितना सधा अदा सेवा की, तुम्हें बसा धड़कन में।।
निभा सका मैं साथ यहीं तक, मुझको मत बिसराना।
हे साथी घर छोड़ के तेरा अपने घर को जाना।।

नेह मिला सद्भाव भी मिला चली जीविका मेरी।
आभारी प्रभु का, सबका हूँ, दी ही कृपा घनेरी।।
अब लेता हूँ विदा, वचन दो, कर्म का धर्म निभाना।
हे साथी घर छोड़ के तेरा, अपने घर को जाना।।

विद्या के इस दिव्य धाम में आराधन स्वर गूँजे।
सद्भावना सुकाम करें हम विद्वानों को पूजें।।
ज्ञान मिले निभ जाये सबसे ये जग बड़ा सयाना।
हे साथी घर छोड़ के तेरा अपने घर को जाना।।

करता हूँ मैं विनय ईश जी फिर भेजो यदि भू पर।
अवसर दो कर दो समर्थ भी हमें कृपा दो छूकर।।
कर्मठ मुझे बनाना जीवन सागर पार लगाना।
हे साथी घर छोड़ के तेरा अपने घर को जाना।।

-सम्पादक, प्राची प्रतिभा (मासिक पत्रिका)
५५४/९३, पवनपुरी लेन ९, आलमबाग, लखनऊ-०५

अभ्यास

❑**दयाशंकर गोयल**

अनगढ़ काया, वृत्ति असंयमित होती मानव-मन की।
नया कार्य करने में जो दिक्कत बन सकती जन की।।
तन को सुगढ़, वृत्तियाँ संयमित करना ध्येय बनाओ।
नित्य-निरंतर एतदर्थ अभ्यास योग अपनाओ।।

अभ्यास योग द्वारा तन, मन को हम ऐसा घड़ सकते।
जिससे हम इच्छानुसार इनसे सुकार्य कर सकते।।
व्यक्ति और व्यक्तित्त्व गठन अभ्यास योग के द्वारा।
है परोक्ष रूप से होता रहता समुचित प्यारा।।

प्रतिभा के विकास में यद्यपि बुद्धि आवश्यक होती।
किन्तु बिनु अभ्यास नहीं वह भी समर्थ हो सकती।।
जैसे बुद्धिमान छात्र यदि पाठ नहीं दोहराये।
पहलवान व्यायाम, क्रिकेटर भी अभ्यास भुलाए।।
तो उनकी क्षमता व योग्यता क्रमशः घटती जाती।
प्रतिभाएं अभ्यास बिना प्रायः कुंठित हो जातीं।।

सुदृढ़ आत्मविश्वास, सतत अभ्यास, धैर्य जन-मन में।
है असामान्य, विलक्षण क्षमताएं भरता जीवन में।।
मानवीय काया में, मन में सुप्त शक्ति भंडारण।
जिन्हें जगा जो हर विषम स्थिति का कर सकते वारण।।
उन्हें असंभव कार्य नहीं फिर कोई भी रह जाता।
लक्ष्य स्वयं उनके बढ़ते पग सहलाने आ जाता।।

ऐसे जन ही भ्रम में भटकों को सद्पथ दिखलाते।
जो अपने तन, मन से वृत्तियों पे संयम रख पाते।।

-१५५४ डी, सुदामा नगर, इंदौर-४५२००९ म०प्र०

सम्पादक : सुमेधा

जानते हो!

–प्रतीक सोनी 'मानव'

❁'जन गण मन' सबसे पहले 1911 में कलकत्ता अधिवेशन में गाया गया था।
❁विश्व में सबसे ज्यादा वैज्ञानिक और आई टी एक्सपर्ट भारतीय मूल के हैं।
❁खाने की सभी वस्तुएँ खराब हो सकती हैं, पर शहद खराब नहीं होता।
❁पूरे विश्व में सबसे ज्यादा फिल्में भारत में बनती हैं।
❁नई कलत हाथ में आते ही आप सबसे पहले क्या जिखते हैं? ९७ प्रतिशत लोग अपना नाम लिखते हैं।
❁ पोस्टकार्ड का उपयोग सबसे पहले आस्ट्रेलिया में हुआ था।
❁दक्षिण अफ्रीका के अंधेरे जंगलों में लाल रंग के मेंढक भी होते हैं।
❁थाईलैंड के मेंढक बांसुरी जैसी आवाज निकालते हैं।

हास्यम्

✹आस्था गुड्डू

❖गोलू रेलवे स्टेशन पर खड़ा था। तभी चोर ने उसकी जेब में हाथ डाला।
गोलू– क्या कर रहे हो?
चोर– पैन ढूंढ रहा हूँ।
गोलू– मांग नहीं सकते थे क्या?
चोर– मैं अजनबियों से बात नहीं करता।
❖एक आदमी हर संडे को होली खेलता था। किसी ने पूछा– आप हर संडे होली क्यों खेलते हैं?
उसने उत्तर दिया– संडे इज अ होली डे।
❖हरसी– रो क्यों रहे हो?
अनु– मेरे अंक बहुत कम आए हैं।
हरसी– कितने प्रतिशत?
अनु– केवल ४४ प्रतिशत।
हरसी– भगवान से डर, इतने में तो दो लड़के पास हो जाते हैं।
❖रोगी– डॉक्टर साहब, क्या चश्मा लग जाने पर मैं पढ़ सकूँगा?'
डॉक्टर– बिल्कुल, फर्राटे से पढ़ लेंगे आप।
रोगी–अच्छा हुआ मेरी पढ़ाई पर खर्च नहीं किया गया, पता नहीं लोग बच्चों को स्कूल भेजने की बजाय उन्हें एक–एक चश्मा क्यों नहीं पहना देते?
❖बेटा– पापा आप कैसे नहाते हैं?
पापा– जैसे तुम नहाते हो,
बेटा– इसका मतलब आप भी नहाते हुए रोते हैं।

प्रहेलिकाः

❁पानी से भरा एक मटका, सबसे ऊँचे लटका।
पी लो मीठा पानी, बिल्कुल नहीं है खट्टा।।

❁एक आँख पर जीव नहीं हूँ।
लंबी हूँ पर सींख नहीं हूँ।।
मेरे पीछे लम्बी कतार,
आती जाती अन्दर बाहर।।

❁चौकी पर बैठी एक रानी।
सिर पर आग बदन में पानी।।

❁लाल रंग है मेरा, खाती हूँ मैं सूखी घास।
पानी पीकर मर जाऊँ, जल जाए जो आए पास।।

❁कान घुमाए बंद हो जाऊँ, कान घुमाए खुल जाता हूँ।
करता हूँ घर की रखवाली,
आता हूँ मैं सब के काम, कोई बताए मेरा नाम।।

नारियल, सुई, मोमबत्ती, आग, ताला।

विचार कणिकाः

❏प्रतिभा आर्या

▯जो तुम्हारी बात सुनते समय इधर उधर देखे उस पर कभी विश्वास मत करो।
▯धीर गंभीर लोग उबाल नहीं खाते।
▯नाप तोल कर चलने वाला कभी धोखा नहीं खाता।
▯सब पदार्थ जाकर आ जाते हैं परन्तु गया समय लौटकर नहीं आता। समय रोकना तो तुम्हारे बस की बात नहीं, किन्तु उसका सदुपयोग करना तुम्हारे बस की बात है।
▯मूर्ख व्यक्ति अपना भला चाहने वालों से वैर करता है।
▯यदि आप अच्छा वक्ता बनना चाहते हैं तो पहले अच्छे श्रोता बनो।
▯जीवन एक उत्सव है। जीवन परमात्मा की सबसे बड़ी सौगात है।
▯बिना सेवा के मन की शुद्धि नहीं होती है।
▯औरों को जगाना है तो पहले खुद जागो।
▯सुधारक बनने से पहले साधक बनो।

रूप बड़ा या गुण

चंद्रगुप्त ने एक दिन अपने प्रतिभाशाली मंत्री चाणक्य से कहा- कितना अच्छा होता आप अगर रूपवान भी होते।

चाणक्य ने उत्तर दिया- महाराज रूप तो मृगतृष्णा है। आदमी की पहचान तो गुण और बुद्धि से ही होती है, रूप से नहीं।

'क्या कोई ऐसा उदाहरण है जहाँ गुण के सामने रूप फीका दिखे?' चंद्रगुप्त ने पूछा।

कई उदाहरण हैं महाराज, चाणक्य ने कहा- पहले आप पानी पीकर मन को हल्का करें, बाद में बात करेंगे। फिर उन्होंने दो पानी के गिलास बारी बारी से राजा की ओर बढ़ा दिये।

'महाराज पहले गिलास का पानी इस सोने के घड़े का था और दूसरे गिलास का पानी काली मिट्टी की उस मटकी का था। अब आप बताएँ, किस गिलास का पानी आपको मीठा और स्वादिष्ट लगा।'

सम्राट् ने जवाब दिया- मटकी से भरे गिलास का पानी शीतल और स्वादिष्ट लगा एवं उससे तृप्ति भी मिली।

वहाँ उपस्थित महारानी ने मुस्कुराकर कहा- महाराज, हमारे प्रधानमंत्री ने बुद्धिचातुर्य से आपके प्रश्न का उत्तर दे दिया। भला यह सोने का खूबसूरत घड़ा किस काम का, जिसका पानी बेस्वाद लगता है। दूसरी ओर काली मिट्टी से बनी यह मटकी, जो कुरूप तो लगती है लेकिन उसमें गुण छिपे हैं। उसका शीतल सुस्वादु पानी पीकर मन तृप्त हो जाता है। अब आप ही बतला दें कि रूप का ज्यादा महत्त्व है या गुण एवं बुद्धि का?

अति छोड़ो

मगध का राजकुमार था श्रोण। बड़ा विलासी। हर समय मदिरा व कामिनियों से घिरा रहता। पर अचानक उसे भोग से विरक्ति हो गई। जीवन में वैराग्य आ गया। वह भगवान बुद्ध का शिष्य बन गया और भिक्षु का जीवन जीने लगा। आहार त्यागकर मात्र जल पर रहने लगा। धूप में बैठकर ध्यान करता। इस सबसे शरीर सूखकर काला व कांटे जैसा हो गया। और कुछ समय बाद वह बीमार भी पड़ गया।

उसे वीणा वादन अतिप्रिय था। एक समय की बात है वह बैठे-बैठे बीमारी की स्थिति में भी वीणा के माध्यम से मन को साधने का प्रयास कर रहा था, पर मन लग ही नहीं पा रहा था। तभी भगवान बुद्ध ने पूछा- 'वत्स, तुम यह क्या कर रहे हो? क्यों इतना कठोर तप कर रहे हो?' वह बोला- 'मुझे निर्विकल्प समाधि प्राप्त करनी है, इसीलिए कठिन तपस्या कर रहा हूँ।' बुद्ध बोले- 'सिद्धि तो तुम तब पाओगे, जब अहं का विसर्जन करोगे।'

'अतिवाद का अहंकार तुम्हारे अंदर बैठा है। इस अतिवाद से निकलो।' उन्होंने समझाया कि कि जैसे वीणा के तार ज्यादा कस दिए जाएँ तो वीणा नहीं बजती और अगर ढीले छोड़ दिए जाएँ तो भी वीणा नहीं बजती। उसी तरह यह शरीर भी एक जीवन-वीणा है। इस जीवन-वीणा को टूटने मत दो। भगवान बुद्ध की बातों का निहितार्थ श्रोण की समझ में आ गया। जैसे ही उसने अपनी जीवन-साधना की लय ठीक कर ली, उसका ध्यान सफल होने लगा। सार यह है कि जीवन में अतिवाद दु:ख का कारण बनता है। अत: अतिवाद का त्याग जरूरी है।

स्वर्ग नरक

एक बार एक शिष्य ने अपने गुरु से बहुत विनती की कि उसे स्वर्ग के दर्शन करने हैं। गुरुजी अपनी योग विद्या के द्वारा उसे स्वर्ग में ले गए। शिष्य ने स्वर्ग में देखा कि एक बहुत बड़ा जलूस निकल रहा है। उस जलूस में एक सुन्दर से रथ पर एक सुन्दर सा धनुर्धारी बैठा है और उसके पीछे लाखों लोग हैं। शिष्य ने पूछा-गुरु जी यह कौन है? गुरु ने कहा बेटा- ये श्री रामचंद्र जी हैं, इनके पीछे लाखों लोग हैं।

इसी प्रकार श्रीकृष्ण जी, महात्मा बुद्ध, महावीर, शंकराचार्य, माधवाचार्य, मुहम्मद साहिब, ईसा मसीह, श्री गुरु नानकदेव जी आदि के कई जलूस निकले और सब के पीछे लाखों लोग थे।

अन्त में अति सुन्दर अलौकिक पुरुष जिसका प्रकाश सब ओर फैल रहा था, पैदल ही जा रहा था, परन्तु उसके पीछे कोई नहीं था। शिष्य बड़ा हैरान हुआ। गुरुजी से पूछा- 'गुरुजी, यह कौन है? गुरुजी ने उत्तर दिया- 'बेटा यह ईश्वर है, इसके पीछे कोई नहीं और न ही कोई इसकी सुन रहा है। शिष्य ने कहा- 'महाराज जी यही सब तो पृथ्वी पर भी हो रहा है।'

गुरु ने कहा- 'बेटा! स्वर्ग नरक कुछ नहीं, सब कुछ यहीं पर है। स्वर्ग का अर्थ सुख विशेष और नरक का अर्थ दु:ख विशेष है। जो शुभ-अशुभ कर्मों के आधार पर ईश्वर इसी पृथ्वी पर दे देता है। निरन्तर उसकी आज्ञा पालन और योगाभ्यास करने वाले को सब दु:खों और जन्म-मरण के बन्धनों से छुड़वा कर मोक्ष भी दे देता है।

-डॉ मुमुक्षु आर्य

प्रेरक प्रसंग

मन की गन्दगी

एक था मगर मच्छ। एक दिन उसके दांत में दर्द हुआ। उसे परेशान देख एक चिड़िया वहाँ आई। चिड़िया उसके दांतों पर जा बैठी। बोली–तुम्हारे दांतों में गंदगी फंसी है मैं उसे निकाल देती हूँ। चिड़िया ने अपनी चोच से गंदगी निकाल करफैंक दी। मगरमच्छ को आराम मिला। फिर अचानक चिड़िया से कहा– मुझे भूख लगी है मैं तुम्हें खाऊँगा। चिड़िया बोली– मगर दादा, जरूर खा लो। पर मैं हूँ छोटी सी। तुम्हारे दांत में फंसकर रह जाऊँगी। दर्द हो तो फिर मत चिल्लाना। मगर घबरा गया–'न न चिड़िया रानी, मैं भूख सह लूँगा, पर दांत का दर्द नहीं सह सकता।'

चिड़िया उड़कर पेड़ पर जा बैठी बोली– 'दांत साफ करने से ही बात नहीं बनेगी, तुम्हारे मन में भी गंदगी भरी है।' वास्तव में उनको अपने मन की ध्यान से सफाई करने की जरूरत है जो अपना भला करने वाले का भी बुरा ही सोचते हैं।

दोस्त और दोस्ती

बारिश की हल्की बूंदें छमाछम बरस रहीं थी।
लेकिन मैं किसी सच्ची दोस्त को तरस रही थी।
पैदा होते ही मिलते हैं रिश्ते सभी,
पर सच्ची दोस्ती का रिश्ता मिलता है कभी कभी।।
दोस्ती का रिश्ता बनता है विश्वास पर।
बिना विश्वास के दोस्ती है सूखा समन्दर।।
जिन्दगी में मित्र ही मित्र का काम किया करते हैं।
झूठे मित्र ही औरों के आगे बदनाम किया करते हैं।।
नादान थी अनजान थी दुनिया के रिश्ते से।
फिर भी बनाया रिश्ता मैंने एक फरिश्ते से।।
अपना नाम वीनू बताया उसने।
मित्रता का सच्चा रिश्ता निभाया उसने।।
मित्र ने दी जिन्दगी मुझे हँसती खेलती।
तभी मैंने की केवल सच्ची मित्र से दोस्ती।।
be aware of false friends

स्वाति, ११वीं मैडिकल, IPS जींद

मूर्ति पूजा की निस्सारता : एक हास्य कथा

प्रस्तुति : **डॉ० भवानीलाल भारतीय**

राजस्थान के एक ग्राम की बात है। एक अग्रवाल वैश्य पुत्रहीन था। उसे किसी ने कहा– भैरव जी को भैंसा भेंट करो अर्थात् उसकी बलि दो। भैरव प्रसन्न होकर तुम्हें पुत्र देंगे। सौभाग्य से उसे पुत्र प्राप्ति हो गई। अब भैरव को उसकी भेंट (भैंसे की बलि) कैसे दे अहिंसक वैश्य! उसने एक तरकीब सोची। एक भैंसा खरीदा और एक मोटे रस्से से बांधकर भैरव मूर्ति के पास लाया। उसे प्रस्तर के भैरव की मूर्ति से बांधा तथा बोला– 'भैरव बाबा! मैं तो अहिंसक बनिया हूँ। आपकी बलि प्रस्तुत है। यथा इच्छा इसका उपयोग करें।' वह तो चला गया। इधर भैंसे ने अपने बंधन को हटाने के लिए जोर लगाया तो रस्से से बंधी मूर्ति उखड़ गई। भैंसा उसे लिए लिए भागा। आगे आगे भैंसा पीछे रस्से बंधे भैरव! गांव के सीमान्त पर एक देवी अपने मठ में बैठी। उसने यह दृश्य देखा तो बोली– अरे भैंरू! यह क्या हाल है? भैंसा तुम्हें खींचे लिए जा रहा है। भैरव क्षुब्ध होकर बोले– 'मरु में बैठी मटका कर (आँखें मटकाती है।) अग्रवाल को बेटा देती तो तेरा भी यही हाल होता।'

३/५, शंकर कालोनी, श्रीगंगानगर

संस्कृति दर्शन

दो पक्ष : कृष्ण पक्ष, शुक्ल पक्ष!
तीन ऋण : देव ऋण, पितृ ऋण, ऋषि ऋण!
चार युग : सतयुग, त्रेतायुग, द्वापरयुग, कलियुग!
चारपीठ : शारदा पीठ (द्वारिका) ज्योतिष पीठ (जोशीमठ बद्रिधाम)
गोवर्धन पीठ (जगन्नाथपुरी) श्रृंगेरीपीठ!
चार वेद : ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद!
चार आश्रम : ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ, संन्यास!
चार अंत:करण : मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार!
पञ्च गव्य : गाय का घी, दूध, दही, गोमूत्र, गोबर!
पञ्च देव : माता, पिता, आचार्य, पति और पत्नी
पंच तत्त्व : पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश!
छह दर्शन : वैशेषिक, न्याय, सांख्य, योग, पूर्व मीमांसा व वेदांत!
सप्त ऋषि : विश्वामित्र, जमदग्नि, भरद्वाज, गौतम, अत्री, वशिष्ठ और कश्यप!
आठ योग के अंग : यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान एवं समाधि!

–उषा सोनी

दोहा : ग्राम में सैनिक पहुंच गए महाराजा के साथ।
नगर निवासी हो जमा पूछ रहे कुशलात।।

आनन्दी :

पूछ रहे कुशलात यहाँ महाराज का कोई ठिकाना था।
दस बारह बच्चे खेलें थे उसी गली को जाना था।।
नकली रेत के खेत बनाकर बालक खेल रचा रहे थे।
एक बालक ने देखा आगे से महाराजा आ रहे थे।।
राजा के हाथी को देखकर बालक छुपने लाग गए।
एक कन्या रह गई खड़ी और सारे बालक भाग गए।

किशोरी का कथन

संभल के आना आगे आने ना दूंगी।
बना बनाया खेल मिटाने ना दूँगी।।टेक।।
लेकर एक लठोरी, खड़ी काशीराम की छोरी।
मारने को पत्थर टोहरी, खेतो में मेहनत होरी
ढाहने ना दूँगी।।१।।
तुम जाना चाहते जहाँ को वापिस जाओ लौट वहाँ को,
रास्ता था तुम्हारा कहाँ को, आए बन बड़े यहाँ को,
जाने ना दूंगी।।२।।
अब तक कह रही जुबानी, मैं भी आखिर क्षत्राणी,
नहीं छोडूं नाम निशानी, गर आए तो होगे हानि,
उलहाने ना दूंगी।।३।।
नगर निवासी आए, तब जोर से बोली लड़की,
तू **चन्द्रभान** समझ ले गर तूने कुछ गड़बड़ की,
तो गाने ना दूंगी।।४।।

दोहा : सूरजमल महाराज ने किया इकट्ठा गाम।
विनीत रूप से कह रहे करो हमारा काम।।

महाराज सूरजमल पंचायत में-

जाति की जाती है जात जाति की जात भलाई कर दो।
हाथ जोड़ कर कहता हूँ तुम मेरे मन की चाही कर दो।।टेक।।

बतला दो यह किस की छोरी, व्यर्थ में मरण कटण नै होरी।
बतलाते हैं नाम किशोरी मेरे साथ सगाई कर दो।।१।।

बनेगी ये लड़की बलवान, मेरा तो है ये ही अनुमान,
कैसी जल्दी चलै जुबान, तुम हमसे असनाई कर दो।।२।।

कन्या की कैसी सूरत, जैसे कोई है देवी की मूरत।
इस लड़की की मनै जरूरत, भाईयो आज सहाई कर दो।।३।।

सुख से बसियो गाम तुम्हारा, आ लिया समझो ईनाम तुम्हारा,
कहे भीष्म ये काम तुम्हारा, **चन्द्रभान** कविताई कर दो।।४।।

भजनावली **(महारानी किशोरी की शादी)**

❒चन्द्रभानु आर्य

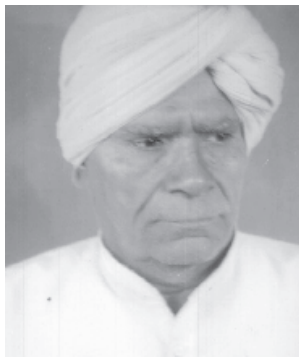

भजन

सुनो ध्यान से बड़े बड़ों की कैसे शादी होती थी।
आज की तरियाँ नहीं कभी धन की बरबादी होती थी।।टेक।।

गुरुदेव के साथ जनकपुर श्री लक्ष्मण और राम गए।
भरत और शत्रुघ्न पीछे सुन करके पैगाम गए।।
एक लड़कों के पिता साथ में करने को इन्तजाम गए।
अब की तरह से हमें बताओ कहाँ गाम के गाम गए।।
लड़की कोई शर्त धरै थी रस्म अनादि होती थी।।१।।

फिर द्रुपद ने अपनी लड़की थी वो ब्याही स्वयंवर से।
नार हिडिम्बा भीम बली के घर में आई स्वयंवर से।।
विद्योतमा नृप भोज की कन्या थी परणाई स्वयंवर से।
सावित्री सत्यवान की कैसे जोट मिलाई स्वयंवर से।।
कन्या को वर छांटण की पूरी आजादी होती थी।।२।।

इसी तरह सूरजमल जी के संग में चार सिपाही थे।
नहीं था फूफा नहीं था मामा ना बाजा ना नाई थे।।
एक था हाथी चार अश्व ना गोती नाती भाई थे।
अकेले थे सूरजमल ना सगे कोई असनाई थे।।
मोटर गाड़ी नकदी की ना वर को व्याधि होती थी।।३।।

काशीराम ने सुन राजा की होडल में पंचायत करी।
गुप्त रूप से अलग बैठ भाई चारे से बात करी।।
एक गऊ दें दई दान में नहीं किसी की दात करी।
विवाह संस्कार करा के किशोरी सूरजमल के साथ करी।।
चन्द्रभान कहे कर्मों से वर्णों की उपाधि होती थी।।४।।

दोहा

विवाह किशोरी का हुआ सूरजमल के साथ।
बड़े बड़ों की इस तरह जाती रही बारात।।

(भजन भास्कर से)

पुणे के वारजे मालवाडी एवं पिंपरी आर्यसमाज में मनाया गया वेद प्रचार सप्ताह

वारजे तथा पिंपरी आर्यसमाज में 28 जुलाई से 10 अगस्त 2014 तक वेद प्रचार सप्ताह मनाया गया। 'वेद वाटिका' गिरीश सोसायटी में सायंकाल तथा रात्रि में भजन प्रवचन हुए। पिंपरी समाज में प्रात: यज्ञ व भजनोपदेश और सायंकाल उपदेश प्रवचन होते थे। प्रमुख वक्ता आचार्यश्री आनंद पुरुषार्थी जी, होशंगाबाद से व भजनोपदेशक श्री संदीप वैदिक जी मुजफ्फरनगर से आमंत्रित थे। आचार्यजी ने सभी सत्रों में वेदमंत्रों को केंद्र में रखकर ही उपदेश दिया। कुछ सामयिक, पारिवारिक, सामाजिक व राष्ट्रिय विषयों पर भी आर्यसमाज का पक्ष रखा। भजनोपदेशक श्री संदीप वैदिक जी के मधुर भजनों को सभी ने सराहा। आचार्यजी ने शानु पटेल इंटर कॉलेज वारजे के अंगरेजी व हिन्दी माध्यम की दोनों संस्थायें, गुजराती कच्छी पटेल समाज का पोकार होस्टल, पिंपरी के आर्य कन्या महाविद्यालय की बी कॉम की छात्राओं व महर्षि दयानंद इंटर कॉलेज की कन्याओं, चार्टर्ड अकाउंटेंट की एक संस्था सी एम आर एस एंड एसोसियेट्स् में लगभग 80 वरिष्ठ एवं छात्र समूह सी0 ए0 को वैदिक विचारधारा का परिचय दिया। इसके साथ ही अनेक परिवारों में आर्यसमाज से सम्बंधित सिद्धांतों को स्पष्ट किया। येरवडा पुणे की सेंट्रल जेल में भी उपदेश का कार्यक्रम रखा गया, जिसमें वैदिक साहित्य कैदियों को वितरित किया। पुणे की सभी आर्यसमाज के अधिकारी महानुभाव उपस्थित थे। वारजे आर्यसमाज मंदिर के यज्ञ में अंतिम दिवस के पूर्णाहुति यज्ञ में 21 यज्ञ वेदियों में 65 दम्पती सम्मिलित हुए। आचार्यजी ने आर्यसमाज के उत्सव में आने के साथ-साथ संगठन से वर्ष भर जुड़े रहने की दक्षिणा यजमानों से मांगी।

अशोक वेलाणी, मंत्री, आर्यसमाज वारजे, पुणे (महाराष्ट्र)

महर्षि दयानन्द पार्क में कार्यक्रम सम्पन्न

आर्यसमाज महर्षि दयानन्द पार्क कन्हैया नगर, त्रिनगर के वार्षिकोत्सव, स्वतन्त्रता दिवस व श्रीकृष्ण जन्माष्टमी के अवसर पर भव्य प्रेरणादायक कार्यक्रम का आयोजन किया गया। आचार्य श्री छविकृष्ण शास्त्री जी के ब्रह्मत्व में यज्ञ सम्पन्न हुआ जिसमें श्री राजेन्द्र आर्य, श्री सत्यप्रकाश शर्मा, श्री श्यामलाल तुंदवाल और श्री मानव मित्तल मुख्य यजमान बने। देशभक्ति और श्रीकृष्ण से सम्बन्धित भजन और प्रवचन का अति सुन्दर कार्यक्रम चला। मुख्य अतिथि डॉ0 श्री नन्दकिशोर गर्ग जी विधायक त्रिनगर ने अध्यक्ष श्री सुरेश गर्ग जी निगम पार्षद त्रिनगर, विशिष्ट अतिथि ब्र0 राजसिंह आर्य जी प्रधान दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा और श्री वीरेन्द्र आर्य जी संचालक आर्य वीर दल दिल्ली प्रदेश ने आचार्य सत्यवीर शास्त्री जी, आचार्य योगेन्द्र शास्त्री जी, आचार्य यदुनाथ शास्त्री और क्षेत्र के गणमान्य महानुभावों की उपस्थिति में राष्ट्रीय ध्वज फहराया। श्रीमती कविता आर्य, आचार्य योगेन्द्र शास्त्री जी, श्री वीरेन्द्र आर्य जी और श्री उज्जवल शर्मा जी के प्रेरणादायक भजन हुए। आचार्य छविकृष्ण शास्त्री जी और ब्र0 राजसिंह आर्य जी ने देश की आजादी में आर्यसमाज के योगदान व योगेश्वर श्रीकृष्ण जी का वैदिक स्वरुप जनमानस के सम्मुख प्रस्तुत किया। गणमान्य व्यक्तियों को स्मृति चिह्न प्रदान कर सम्मान किया गया। उपस्थित लोगों द्वारा कन्हैया नगर मेट्रो स्टेशन के पास वाले चौक का नाम और एक भव्य गेट युग प्रवर्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती जी के नाम पर रखने की अपील की गयी जिसे डॉ0 नन्दकिशोर गर्ग जी ने अतिशीघ्र पूरा करने का आश्वासन दिया। कार्यक्रम का सुन्दर संचालन युवा कवि-चित्रकार हर्षवर्धन आर्य ने किया। राधेश्याम आर्य, राजीव आर्य, श्रीराम वर्मा, श्रवण आर्य, विशु आर्य और नकुल आर्य का सराहनीय योगदान रहा। -**प्रदीप आर्य**

कु० सृष्टि गोयल को कल्पना चावला पुरस्कार

हिण्डौन के आर्यसमाज भवन में गत १८ अगस्त को द्वादश कल्याणमल आर्य स्मृति कल्पना चावला पुरस्कार कोटा की कु० सृष्टि गोयल को प्रदान किया गया। पुरस्कार के अन्तर्गत रु ५१०० की नकद राशि के अतिरिक्त प्रशस्ति पत्र, संस्था का प्रतीक चिह्न, शाल एवं श्रीफल पतंजली योगपीठ हरिद्वार के महासचिव श्री अजय आर्य ने प्रदान किये। समारोह में सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद के प्रदेश अध्यक्ष यशपाल यश ने कहा कि यह कार्यक्रम पुनर्जागरण के पुरोधा स्वामी दयानन्द सरस्वती द्वारा निर्दिष्ट नारी उत्थान कार्यक्रम की ओर ही एक प्रयास है। सर्वश्री गोकुलचन्द गोयल, डॉ० प्रमोद पाल, संजय गुप्त एवं प्रभाकर देव आर्य ने भी समारोह को संबोधित किया। आर्यसमाज के प्रधान श्री शांतिस्वरूप आर्य तथा रामबाबू आर्य ने समारोह के अध्यक्ष केदार जी एवं मुख्य अतिथि अशोक आर्य का सम्मान किया तथा सभी उपस्थितों का आभार प्रकट किया। (ईश्वरदयाल माथुर)

जींद में पधारे स्वामी विवेकानन्द परिव्राजक

ख्यातिप्राप्त आध्यात्मिक गुरु स्वामी विवेकानन्द परिव्राजक (आर्यवन रोजड़) के सान्निध्य में आर्यसमाज जींद जंक्शन के प्रांगण में २२ से २४ अगस्त तक क्रियात्मक ध्यान योग शिविर का आयोजन किया गया जिसमें सैंकड़ों श्रद्धालुओं ने अध्यात्म लाभ उठाया। स्वामी जी ने व्यावहारिक रूप से परमात्मा से जुड़ने को प्रेरित किया। मंत्री मा० पृथीसिंह मोर ने कार्यक्रम का संयोजन किया। प्रधान मा० सतवीर जुलानी, महासिंह आर्य व रमेशचन्द्र आर्य का विशेष सहयोग रहा।

गीता को पाठ्यक्रम में शामिल करना आज की आवश्यकता : विहिप

विनोद बंसल मीडिया प्रमुख

नई दिल्ली, अगस्त 7। गीता के ज्ञान को पाठ्यक्रम में शामिल करना आज की महती आवश्यकता है। विश्व हिन्दू परिषद दिल्ली के महामंत्री श्री रामकृष्ण श्रीवास्तव ने एक बैठक के बाद कहा कि गीता व महाभारत की शिक्षाएँ यदि बाल मन में ही घर कर गईं होतीं तो आज जिन समस्याओं से देश को जूझना पड रहा है, शायद हमारे पास तक न फटकतीं। गीता के ज्ञान को किसी धर्म या संप्रदाय से जोड़कर देखने वालों पर प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए उन्होंने कहा कि पांच हजार से अधिक वर्ष पूर्व इन महान ग्रथों की रचना जिस समय की गई, उस समय न मुस्लिम थे न ईसाई और न कोई अन्य वर्तमान मत-पंथ संप्रदाय। इन ग्रंथों में कहीं जब हिन्दू, मुस्लिम या ईसाई शब्द आया ही नहीं तो इसे किसी सांप्रदायिक चश्मे से देखना ही वास्तव में सांप्रदायिकता है। उन्होंने मांग की कि विश्व के इन पुरातन व महानतम ग्रंथों को अविलम्ब पाठ्यक्रम में सम्मिलित किया जाए जिससे अनैतिकता, भ्रष्टाचार, महिला उत्पीडन इत्यादि अनेक गंभीर सामाजिक बीमारियों से निपटने के लिए आगे आने वाली पीढ़ी को सही दिशा मिल सके।

विहिप दिल्ली के मीडिया प्रमुख श्री विनोद बंसल ने बताया कि गीता और महाभारत मानवता और मानवीय जीवन मूल्यों को दर्शाने वाले मूल ग्रंथ हैं। गीता व महाभारत व्यक्ति व राष्ट्र-निर्माण की कुंजी हैं जिसके विश्व व्यापी प्रचार मात्र से विश्व शांति की पुनर्स्थापना आसानी से हो सकती है। विश्व हिन्दू परिषद दिल्ली भारत तथा देश की समस्त राज्य सरकारों से अनुरोध करती है गीता व महाभारत जैसे अनुपम ग्रंथों के उचित अध्ययन, पठन-पाठन व शोध की व्यवस्था अपने-अपने स्तरों पर करें जिससे प्रत्येक भारतीय हर प्रकार से समृद्ध होकर देश के साथ-साथ विश्व के चहुँमुखी विकास में अपना योगदान सुनिश्चित कर सके।

बैठक में विहिप दिल्ली के अध्यक्ष श्री रिखब चन्द जैन, उपाध्यक्ष श्री रोशन लाल गोरखपुरिया, श्री अशोक कुमार तथा श्री गुरदीन प्रसाद रुस्तगी, मंत्री श्री रामपाल सिंह यादव व विजय प्रकाश गुप्ता तथा दुर्गा वाहिनी संयोजिका श्रीमती संजना चौधरी, मातृ-शक्ति संयोजिका श्रीमती संध्या शर्मा सहित अनेक पदाधिकारी उपस्थित थे।

देश की रक्षा – पृष्ठ १४ से आगे

करता है, उसके बच्चे तो ऐसे-2 करते हैं, उन्हें मत देखिए स्वयं को देखिए। अपने घर में बच्चों को श्रेष्ठ व्यवहार सिखाईये। उन्हें सभ्य बनाईये। घर में वैदिक साहित्य यथा- वेद, उपनिषद्, दर्शन, रामायण, महाभारत, मनुस्मृति, सत्यार्थ प्रकाश आदि ग्रंथ रखिए। विद्वानों के लिखे हुए विवेचनात्मक ग्रंन्थों को रखें। यह नियम बना लें कि प्रतिदिन कम से कम 5-7 पृष्ठ बच्चों के साथ मिलकर पढ़ेंगे। उन्हे शुद्ध भारतीय दर्शन, संस्कृति की शिक्षा देंगें। समय-2 पर लगने वाले विभिन्न चरित्र निर्माण शिविरों में लेकर जायेंगे। रविवार को बिस्तर पर पड़े-2 पेट को ठूंसने एवं टी.वी. पर ऊल-जलूल कार्यक्रम देखने के स्थान पर पास में स्थित आर्यसमाज के सत्संग में लेकर जाया करेंगे। अपने प्राचीन महान् योद्धाओं, ऋषियों, तपस्वियों एवं त्यागी संन्यासियों के जीवन के बारे में उन्हें बतायेंगे।

धन का उपयोग केवल अपने लिए न करके देश एवं धर्म का कार्य करने वाली संस्थाओं को, असहाय भूखे नंगों को, अनाथों को, यथा शक्ति दान देने के लिए भी यत्न करेंगे। समय-2 पर अपने घर पर श्रेष्ठ विद्वानों को आमन्त्रित करके उनसे अपनी शंकाओं का समाधान करेंगे। बच्चों पर कड़ी दृष्टि रखकर उनके गुरु बनकर कार्य करेंगें। धन का महत्व है, परन्तु वह संतान से बड़ा नहीं है। हमारी संतानें ही हमारी सबसे बड़ी सम्पति हैं। इस सूत्र को कभी मत भूलिये। एक योग्य संतान राष्ट्र को अर्पित करना सौ पुण्यों से अधिक फलदायक है। समय-2 पर विचार गोष्ठियां, सेमिनार शिक्षा का स्तर सुधारने पर आयोजित कीजिए। इसमें वैदिक विद्वानों के साथ-2 शिक्षाविदों एवं नेताओं को भी आमन्त्रित कीजिए।

जो लोग ईश्वर के नाम पर, धर्म के नाम पर, स्वयं को आपके और ईश्वर के बीच में ऐजेंट बना कर ला रहे हैं उनसे दूर रहिए। ईश्वर का आपके साथ सीधा एवं घनिष्ट सम्बध है। गुरु वह है जो आपके आचरण को सुधारे न कि अपना उल्लू सीधा करे। जो ईश्वर के स्थान पर अपने को पुजवाता है वह तो ईश्वर का शत्रु है, निश्चय जानिये।

आगे आने वाला समय वास्तव में बड़ा भयानक है यदि हम सावधान नहीं हुए तो बहुत कष्ट उठाने पड़ेंगे, दुःख भोगने पड़ेंगे। अन्त में मैं यहीं कहना चाहूँगा कि-

आओ! मिलकर विचार करें,
पहले हम आप सुधरें फिर सबका सुधार करें।।

दर्शन शास्त्र और गीता––पृष्ठ २१ से आगे

श्री आनन्दतीर्थ (मध्वाचार्य) के भाष्य में यद्यपि इस श्लोक की व्याख्या शंकराचार्य जी के भाष्य से भिन्न की गई है तथापि वेदों की नित्यता और ईश्वरीयता को–

तानि चाक्षराणि नित्यानि 'वाचा विरूप नित्यया। वृष्णे चोदस्व सुष्टुतिम्।।' अनादि निधना नित्या वागुत्सृष्टा स्वम्भुवा। अत एव च नित्यत्वम्।--- ब्रह्म तस्मान्नित्यं यज्ञे प्रतिष्ठित्।। इत्यादि शब्दों द्वारा उसमें भी स्पष्ट माना गया है। इसकी पुष्टि वेद की अन्त: साक्षी 'वाचा विरूप नित्यया' महाभारत के वचन 'अनादिनिधना नित्या' तथा वेदान्त सूत्र 'अत एव च नित्यत्त्वम्' इन के उद्धरणों से की गई है।

रामानुज भाष्य की अमृत तरङ्गिणी टीका में भी–

वेदात् कमोत्पत्ति: च---- यस्मात् तादृशम्।

इत्यादि वचनों द्वारा वेद की नित्यता का प्रतिपादन है। नीलकण्ठी टीका में तो और भी स्पष्ट रूप से, इस श्लोक की टीका में लिखा है–

कर्म (ब्रह्मोद्भवं) वेदोद्भवं वेद एवं धर्मे प्रमाणं न तु पाखण्डादिप्रणीतागम:। ब्रह्म वेदोऽपि अक्षरसमुद्भवम्। अस्य महतो भूतस्य निश्वसितमेतद्यदृग्वदो यजुर्वेद: इत्यादि श्रुते:। ------एतेन वेदस्य नित्यत्वं शब्दस्य विभुत्वं च दर्शितं नित्यं नियमेन यज्ञे प्रतिष्ठितं तात्पर्येण पर्यवसन्नम्।। नीलकण्ठी टीका पृ. 183

अर्थात् कर्म के विषय में वेद प्रमाण है और वेद की उत्पत्ति परमात्मा से है अत: उसकी प्रामाणिकता में कोई सन्देह नहीं हो सकता। इत्यादि।

गीता के सप्तदश अध्याय में ओं तत्सत् इस नाम से ब्रह्म का निर्देश करते हुए श्लोक 23 में कहा है कि–

ओं तत्सदिति निर्देशो ब्राह्मणस्त्रिविध: स्मृत:।
ब्राह्मणस्तेन वेदाश्च, यज्ञाश्च विहिता: पुरा।।

अर्थात् ब्रह्म का 'ओं तत् सत्' इन नामों से शास्त्रों में निर्देश किया गया है। उसी से ब्राह्मणों (ब्रह्मज्ञानी वेद वेत्ताओं) वेदों और यज्ञों का विधान किया गया है। अर्थात् वेद के अध्ययनाध्यापन में दिन-रात तत्पर ज्ञानी परमेश्वर के सच्चे भक्त, उसके बड़े पुत्र कहलाते हैं। वेदों का इसी ब्रह्म ने उपदेश दिया है जिन के द्वारा ही यज्ञकर्म चलते हैं अत: इन तीनों की उत्पत्ति विशेष रूप से उस परमेश्वर से मानी गई है। इस श्लोक में भी वेदों को स्पष्टतया ईश्वरीय बताया गया है।

शिक्षा के ढांचे – पृष्ठ १२ से आगे

रवींद्रनाथ टैगोर ने कहा था कि विद्यार्थियों को प्रत्येक दिन कम से कम एक बार गायत्री-मंत्र का पाठ अवश्य करना चाहिए। किंतु ऐसी मूल्यवान सीखों से बच्चों को मानो प्लेग की तरह बचाया गया है। बदले में पश्चिमी अनुकरण या निर्देश पर नितांत भौतिकवादी और सामाजिक विभेदकारी, दुराग्रही पाठ पढ़ाने की जिद रही है। ऐसी बौद्धिकता, शिक्षा नहीं, राजनीति केंद्रित रही है। यह बच्चों को आत्मिक रूप से निर्बल, व्यक्तिवादी और नितांत राज्याश्रित अकेला 'उपभोक्ता' बनाती है। समय रहते इस घातक प्रवृत्ति को रोकना जरूरी है।

यह सब इसलिए छिपा रहा है, क्योंकि शिक्षा के प्रति समझ में ही विकृति भर गई है। 'शिक्षा को रोजगार से जोड़ो' के नारे ने समय के साथ हमारी शिक्षा को मात्र रोजगार-ट्रेनिंग में बदल दिया। तदनुरूप विश्वविद्यालयों ने विश्वविद्यालय शब्द का अर्थ ही खो दिया। विश्वविद्यालय सदैव बड़े ज्ञानियों, बौद्धिकों का केंद्र होते रहे हैं। विश्व विद्यालय का अर्थ था-सर्वोच्च चिंतन केंद्र। वहाँ समाज के चिंतक, मार्गदर्शक, नीतिकार निखरते थे। रोजगार का प्रशिक्षण दूसरी चीज थी, जिसका हर समाज में अलग स्थान था। श्री अरविंद ने कहा था-किसी भी महान देश का बौद्धिक पतन हमेशा इन्हीं तीन गुणों के क्षरण से आरंभ होता है। जो हैं- विवेकपूर्ण तर्क करने की क्षमता, तुलना और विभेद करने की क्षमता तथा अभिव्यक्ति की क्षमता। इससे समझें कि युवाओं में इन क्षमताओं के सतत विकास की कितनी आवश्यकता है।

हमें उस घातक प्रवृत्ति पर सोचना चाहिए जो केवल धन कमाने के प्रशिक्षण को ही 'शिक्षा' का पर्याय बना रही है। भारत के युवा केवल तकनीकी, मशीनी और कार्यालय चलाने वाले मजदूर, प्रबंधक आदि भर बन रहे हैं। उन्हें कितनी ही अच्छी आय हो रही हो, वे अपने ही देश, समाज के वर्तमान और भविष्य के बारे में सोचने-विचारने में असमर्थ होंगे। स्वयं अपने अस्तित्व, जीवन-मूल्य और भूमिका के बारे में वे कुछ ढंग का सोच-विचार नहीं कर सकेंगे। आशा है, नई शिक्षा नीति इन बातों का भी संज्ञान लेगी और विकृतियों को भी सुधारेगी।

हिन्दी-- पृष्ठ ११ से आगे

भाषी होते हुए सर्वप्रथम अपनी आत्म-कथा हिन्दी में लिखी। सृष्टि के आरम्भ में सृष्टि के उत्पत्तिकर्ता ईश्वर से वेदों की उत्पत्ति हुई थी। स्वामी दयानन्द के समय तक वेदों का भाष्य- व्याख्यायें-प्रवचन-लेखन व शास्त्रार्थ आदि संस्कृत में ही होता आया था। स्वामीजी पहले व्यक्ति थे जिन्होंने वेदों का भाष्य संस्कृत के साथ-साथ जन-सामान्य की भाषा हिन्दी में भी करके सृष्टि के आरम्भ से जारी पद्धति को बदल दिया। न केवल वेदों का भाष्य अपितु अपने सभी सत्यार्थ प्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका, संस्कार विधि, आर्याभिविनय, व्यवहार भानु आदि ग्रन्थ हिन्दी में लिखे जो धार्मिक जगत के इतिहास की अन्यतम घटना है।

हमें लगता है कि देश के सभी राजनैतिक दलों एवं विद्वानों ने स्वामी दयानन्द के प्रति घोर पक्षपात का रवैया अपनाया है जिससे उनका पक्षपातरहित न्यायपूर्ण मूल्यांकन आज तक नहीं हो सका। प्राचीनतम धार्मिक साहित्य से सम्बन्धित यह घटना जहाँ वैदिक धर्म व संस्कृति की रक्षा से जुड़ी है वहीं भारत की एकता व अखण्डता से भी जुड़ी है। न केवल वेदों का ही अभूतपूर्व, सर्वोत्तम, सत्य व व्यावहारिक भाष्य उन्होंने हिन्दी में किया है, अपितु मनुस्मृति एवं अन्य शास्त्रीय ग्रन्थों का अपनी पुस्तकों में उल्लेख करते समय उनके उद्धरणों के हिन्दी में अर्थ भी किए हैं।

स्वामी दयानन्द के साथ ही उनके द्वारा स्थापित आर्यसमाज एवं उनके अनुयायियों द्वारा स्थापित गुरुकुलों, डी.ए.वी. कालेजों, आश्रमों आदि द्वारा भी हिन्दी के प्रचार-प्रसार में उल्लेखनीय कार्य किया गया है। गुरुकुल कांगड़ी, हरिद्वार में देश में सर्व प्रथम विज्ञान, गणित सहित सभी विषयों की पुस्तकें हिन्दी में तैयार करायीं गईं एवं उनका सफल अध्यापन हिन्दी माध्यम से किया गया। इस्लाम मजहब की पुस्तक कुरआन को प्रामाणिकता के साथ हिन्दी में सबसे पहले अनूदित कराने का श्रेय भी स्वामी दयानन्द जी को है। इसका प्रकाशन भी किया जा सकता था परन्तु किन्हीं कारणों से यह कार्य नहीं हो सका। यह अनुदित ग्रन्थ परोपकारिणी सभा के संग्रहालय में सुरक्षित है।

ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका ग्रन्थ में स्वामी दयानन्द जी ने लिखा है कि जो व्यक्ति जिस देशभाषा को पढ़ता है उसको उसी का संस्कार होता है। अंग्रेजी या अन्यदेशीय भाषा पढ़ा व्यक्ति सत्य, ज्ञान व विज्ञान पर आधारित विश्व वरणीय वैदिक संस्कृति से सर्वथा दूर देखा जाता है। इसके अतिरिक्त वह पाश्चात्य एवं अन्य वाममार्गी आदि जीवन शैलियों की ओर उन्मुख देखा जाता है जबकि इनमें मानवीय संवेदनाओं व मर्यादाओं का अभाव देखा जाता है। इसका उदाहरण- इनमें पशुओं के प्रति दया भाव के स्थान पर उन्हें मारकर उनके मांस को भोजन में सम्मिलित किया गया है जो कि भारतीय वैदिक धर्म व संस्कृति के विरुद्ध है। अत: स्वामी जी का यह निष्कर्ष भी उचित है कि हिन्दी व संस्कृत के स्थान पर अन्य देशीय भाषाओं को पढ़ने से मनुष्य वैदिक संस्कारों के स्थान पर उन-उन देशों के संस्कारों से प्रभावित होता है।

एक षड्यन्त्र के अन्तर्गत विष देकर दीपावली सन् 1883 के दिन स्वामी दयानन्द की जीवनलीला समाप्त कर दी गई। यदि स्वामीजी कुछ वर्ष और जीवित रहे होते तो हिन्दी को और अधिक समृद्ध करते और इसका व्यापक प्रचार करते। इससे हिन्दी भाषा का वर्तमान स्वरूप व विस्तार आज से कहीं अधिक उन्नत, सरल व सुबोध होता।

हिन्दी प्रेमी रत्न वह कैसे थे अनमोल।
कलम आज तू स्वामी दयानन्द की जय बोल।।

ओ३म्

M- 98968 12152

रवि स्वर्णकार

हमारे यहाँ सोने व चांदी के जेवरात
आर्डर पर तैयार किये जाते हैं।

प्रो० रविन्द्र कुमार आर्य

आर्य समाज मंदिर, रेलवे रोड़,
जीन्द (हरि०)-१२६१०२

मैं कैसा मरण चाहता हूँ-- पृष्ठ २३ से आगे

हे प्रभु! ज्ञान विज्ञान, मनुष्य के कल्याण के सब रास्ते तो आपने बता दिये, जीवन मरण के प्रश्न को भी हल कर दीजिए। प्रभु ने कहा- देख और समझ। संसार के समस्त प्राणियों की रचना का कारण मैं हूँ। आत्मा को मानव का चोला भी मैंने ही दिया है। अन्य जीवधारियों को बुद्धि-विवेक नहीं दिया। मानव को ही बुद्धि ज्ञान-विवेक और कर्म की स्वतंत्रता प्रदान कर दी। लगभग अपनी समस्त शक्तियों का उपभोग करने का रास्ता दिखा दिया पर जीवन-मरण अपने हाथ में रखा, क्योंकि मुझे मालूम था कि मानव नाम का यह प्राणी बुद्धि और स्वतंत्रता दोनों का ही दुरुपयोग अधिक और सदुपयोग कम करेगा। मनुर्भव के उपदेश को वह अनुसना ही करेगा।

देखो ना, जिस व्यक्ति ने जीवन में उन्नति करने में दूसरों का अहित नहीं किया। भयंकर विपरीत परिस्थितियों में भी धैर्य को छोड़कर कोई कुटिल मार्ग नहीं अपनाया। यदि जीवन में उसकी सफलता चमत्कारिक नहीं रही फिर भी वह पूर्णतया संतुष्ट होकर जीवन यापन करता रहा, निष्ठावान रहा। आत्मिक सुख और शांति उसकी जीवन संगिनी बनी रही। ऐसा ही व्यक्ति सार्थक जीवन जीता है और ऐसा ही व्यक्ति 'जीवेम शरदः शतम्' की प्रार्थना करने का हक रखता है और उसे ही प्रभु शांतिपूर्वक मृत्यु की महा निद्रा को सौंप देता है।

ऐसे व्यक्ति का निर्माण किया जाता है, अपने आप नहीं बनता। उसे बचपन से ही नहीं, वरन् गर्भाधान से ही संस्कारवान् बनाया जाता है। उसे सत्-पथ पर चलने की प्रेरणा, योग्यता और सामर्थ्य प्रदान किया जाता है। सौ वर्ष के लम्बे जीवनकाल में अथवा जितने वर्षों का उसको जीवन मिला हो, समस्त झंझावातों को झेलकर जब वह जीवन के अवसान की ओर बढ़ता है, तब उसे पूर्णता का सुख मिलता है और शांति की मृत्यु मिलती है। सोते-सोते, बात करते-करते प्राण पखेरु उड़ जाते हैं। लोग कहते हैं कि एक भला आदमी चला गया। मेरी माँ और बाऊजी तथा परिवार के दो तीन सदस्य इसी तरह अलविदा हुए। हे प्रभु! मुझे भी ऐसा ही मरण देना।

नोट :- २८ जनवरी २०१४ को यह लेख मैंने लिखा था। अभी टाईप भी नहीं कराया था और कुछ रुक कर भेजने का विचार कर रहा था; पर मुझे क्या पता था कि ठीक १४ दिन बाद ही नियन्ता मृत्यु का आभास करा देगा। दिनांक ११ फरवरी २०१४ सुबह १०:३० बजे ब्रेन हेमरेज का पहिला अटैक हुआ। लगभग अचेतावस्था में यथाशीघ्र न्यूरोफिजियशन के पास ले जाया गया। परिवार क्लिनिक, ग्वालियर में तीन दिन आई० सी० यू० में रखकर घर भेज दिया गया। पुनः दिनांक २४ फरवरी २०१४ को दुबारा ब्रेन हेमरेज हो गया। घर से ही पूर्ण अचेतावस्था में परिवार क्लिनिक ग्वालियर ले जाया गया। शाम ८ बजे ब्रेन ऑपरेशन किया गया। पूर्व रात १ बजे से शाम ८ बजे यानि १९ घण्टे नियन्ता ने अपनी गोद में रखा, फिर शल्य चिकित्सक न्यूरोसर्जन डॉ० जे० पी० गुप्ता के माध्यम से वापिस लौटा दिया - पूरी मानसिक और शारीरिक शक्तियों के साथ। अब मेरे समक्ष प्रश्न यह है कि क्यों लौटाया? जीवन के समस्त दायित्वों को निर्वहन कर चुका था। महर्षि का ''तर्पण'' भी कर दिया था और शेष जीवन 'अर्पण' कर दिया था- (दो पुस्तकें लिखकर)। मांग भी लिया था कि कैसा 'मरण' चाहता हूँ पर नियन्ता के बुलावे का इंतजार था। नियन्ता ने बुलावा भेजा भी पर रास्ते से लौटा दिया। पौराणिक होता तो लिखता- यमदूत को लगा होगा कि गलत व्यक्ति को ले जा रहा हूँ इसलिए वह वापिस छोड़ गया। मुझे पहिले सावित्री-सत्यवान् की कथा पर विश्वास नहीं था, पर अब विश्वास हो रहा है।

एक दिन हम पति पत्नी बात कर रहे थे। मैंने पत्नी से कहा- हम दोनों की बहुत आयु हो चुकी है। उस समय ७५ वर्ष-७३ वर्ष। दोनों में से कोई भी जा सकता है। अगर तुम चली जाओगी तो मेरा तो बिल्कुल कबाड़ा हो जाएगा, क्योंकि मेरे व्यक्तित्व में लोच नहीं है, ठूंठ हूँ। पत्नी ने उत्तर दिया- मेरे जाने से तुम्हारा आधा नुकसान होगा, क्योंकि मैं तुम्हारी अर्द्धांङ्गिनी हूँ और तुम्हारे जाने से तो मेरा सब कुछ चला जाएगा। पत्नी की यह बात जब मुझे सदैव याद रहती है तो विधाता को क्यों नहीं? क्या उसके लिए ही मुझे लौटाया है? विधाता का लिखा किसने पढ़ा है?

लाचार अंगविहीन, अंधत्व का जन्म से शिकार, भीषण रोगों से ग्रस्त किसी भी मनुष्य से पूछिए कि क्या वह मरना चाहता है? उत्तर 'न' में ही मिलेगा।

सम्पादक, प्रकाशक, मुद्रक चन्द्रभानु आर्य द्वारा अपने स्वामित्व में, ऑटोमैटिक ऑफसैट प्रैस रोहतक से छपवाकर, कार्यालय शान्तिधर्मी ७५६/३, आदर्श नगर, सुभाष चौक (पटियाला चौक), जीन्द-१२६ १०२ (हरि०) से २४-०८-२०१४ को प्रकाशित।

श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास, उदयपुर

के तत्त्वावधान में

17वां सत्यार्थप्रकाश महोत्सव

इस अवसर पर

अखिल भारतीय आर्य भजनोपदेशक परिषद् का वार्षिक सम्मेलन

वयोवृद्ध भजनोपदेशक सम्मान समारोह

दिनांक 11–12 अक्तूबर 2014

अधिकाधिक संख्या में अवश्य पधारें।

निवेदक

महाशय धर्मपाल	स्वामी सुमेधानन्द सरस्वती	अशोक आर्य	डॉ. अमृतलाल तापड़िया	भवानीदास आर्य
अध्यक्ष	न्यासी	कार्यकारी अध्यक्ष	संयुक्त मंत्री एवं संयोजक	मंत्री

एवं समस्त न्यास परिवार

ओ३म्

आर्यसमाज जड़ौदा पाण्डा सहारनपुर उ.प्र.

11वां वार्षिकोत्सव 17 से 18 अक्तूबर 2014

आमंत्रित विद्वान् : डॉ. शिवदत्त पाण्डे, वेद वेदांग विद्यापीठ, सुलतानपुर, डॉ. जितेन्द्र कुमार वेदालंकार, शाहपुर राजस्थान, पं. संदीप वैदिक भजनोपदेशक

आप सपरिवार सादर आमंत्रित हैं।

: निवेदक :

महेशचन्द्र त्यागी
प्रधान

अनिलकुमार त्यागी
मंत्री

संस्थापक सदस्य : सूरजमल त्यागी, कोटा 9352644260

ओ३म्

आर्ष ज्योति गुरुकुल आश्रम, कोसरंगी

पो. पचेड़ा, जिला महासमुन्द (छ. ग.) 493545

प्रान्त स्तरीय वेद एवं वैदिक संस्कृति सम्मेलन

5 से 7 दिसम्बर 2014

सौ से अधिक वैदिक विद्वानों का आगमन

वेद के सूक्ष्मतम विषयों पर चिन्तन, चर्चा व संगोष्ठी, सस्वर वैदिक पाठ।

आप सब को पावन निमंत्रण

कोमल कुमार, आचार्य (सम्पर्क : 96170 82000)

R.N.I. No. 70866/99 शान्तिधर्मी हिन्दी मासिक (सितम्बर, २०१४) P.R. No. : PKL 150-A/2014-16

ओ३म्

शांतिधर्मी एक अद्वितीय पत्रिका है

इसमें परिवार के प्रत्येक सदस्य के लिये स्वस्थ और सुरूचिपूर्ण सामग्री होती है।

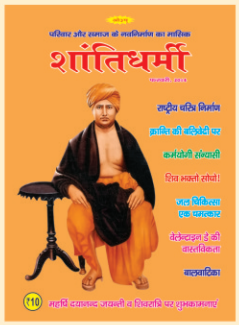

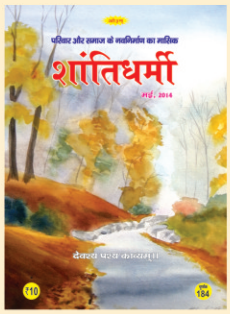

- शांतिधर्मी में धर्म-दर्शन के रहस्य, राष्ट्र व समाज की ज्वलंत समस्याओं पर अधिकारी विद्वानों के श्रेष्ठ विचार होते हैं।
- शांतिधर्मी भारतवर्ष के गौरवपूर्ण इतिहास की झलक दिखाता है।
- शांतिधर्मी वह मार्ग दिखाता है, जिसे पाने के लिये लोग भटक रहे हैं। परिवार में समाज में सह-अस्तित्व व अन्तरात्मा में सुख शांति का संदेशवाहक है।
- शांतिधर्मी उस अध्यात्म का प्रचार करता है-जिसे अपनाने में देश-काल, जाति, मजहब, सम्प्रदाय की सीमाएँ आड़े नहीं आतीं। यह सच्चे ईश्वरीय ज्ञान का प्रचारक है।
- शांतिधर्मी स्वाध्याय भी है और स्वस्थ मनोरंजन का साधन भी।
- शांतिधर्मी प्रत्येक श्रेष्ठ-धार्मिक-राष्ट्रप्रेमी-मानवतावादी-व्यक्ति के लिये एक विचार-सूत्र है। प्रत्येक श्रेष्ठ परिवार का आभूषण है।

शांतिधर्मी पढ़िये-

अपने प्रति, समाज के प्रति, राष्ट्र के प्रति, ईश्वर के प्रति सर्वांगीण दायित्वों को जानिये।
जीवन के जटिल व गूढ़ रहस्यों को सहज ही सुलझाईये।

शान्तिधर्मी कार्यालय
756/3, आदर्श नगर, सुभाष चौक (पटियाला चौक)
जीन्द-126102 (हरियाणा)
मो. 09416253826 E-mail : shantidharmijind@gmail.com